Chandamama, May '53 Photo by V. H. Rao

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

यंत्र - वाद्य

प्रेषक :
खुशालचन्द बी. शाह, गदग

बचपन से ही दांत साफ़ करने का अभ्यास करना [illegible] का
प्रमुख कर्तव्य होना चाहिये। बच्चों के छोटे [illegible]
अभ्यास दिनचर्या का विषय बन जाता है [illegible]
रखने से जीवन भर दांत के व्याधियों से छुटकारा मिल जाता है—

दि कैलकटा केमिकल कं. लि. ३५, पंडितिया रोड, कलकत्ता—२९.
शाखाएँ: मद्रास, बम्बई, दिल्ली, पटना, नागपुर. सब जगह बेचा जाता है.

चन्दामामा

विषय-सूची

★

सेवा का महत्व ६
मुख-चित्र ८
सफल-यात्रा ९
रत्न-मुकुट १३
सत्य-वादी २१
चार सवाल २४
पंछी का पत्र २५
शिला-मुख २९
करके देखो - ३६
समाण समाधि ३७
टपके फल ४१
पेड़ ऊपर क्यों बढ़ता है ! ४५
जीवन - जल ४६
रङ्गीन चित्र - कथा ५३

इनके अलावा फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता, मन बहलाने वाली पहेलियाँ, सुन्दर चित्र और कई प्रकार के तमाशे हैं।

कटेली चम्पा
केश तैल
KATELICHAMPA
HAIR OIL
ताजे फूलों की गन्ध
और केश शोभा के लिये
सर्वोत्तम
वीर-बच्चा
बच्चों के लिये सर्वोत्तम पुष्टई
दुबले पतले बच्चों को मोटा ताज़ा
और नीरोग रखने के लिये
VEER-BACHHA
A TONIC FOR CHILDREN
बिडला लेबोरेटरीज
कलकत्ता
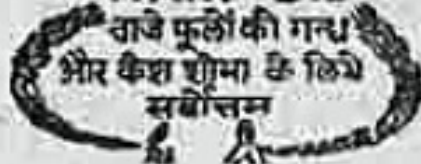
चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

इस अंक में 'सफल यात्रा' नाम की एक छोटी सी कहानी प्रकाशित हो रही है। यह कहानी जातक-कथाओं में से ली गई है। जातक-कथाएं भगवान बुद्ध के पूर्व-जन्मों का वृत्तांत बताती हैं। ये सुन्दर कहानियाँ आज से दो हजार चार सौ बरस पहले की हैं। ये संसार को बौद्ध-धर्म की एक अमूल्य देन हैं। हिन्दुओं के लिए भी इनका कुछ कम महत्व नहीं है। क्योंकि भगवान बुद्ध तो आखिर हमारे ही भगवान के दस अवतारों में से एक माने जाते हैं। आर्य-धर्म के दो महान सत्यों, संयम और अहिंसा का ही भगवान बुद्ध ने प्रचार किया। इन शिक्षा-प्रद कहानियों का भारत में ही नहीं, तिब्बत, चीन, जावा, सुमात्रा और लङ्का में भी खूब प्रचार है। इन अपूर्व कथाओं को एक एक कर हर महीने पाठकों के सामने रखने का हमारा विचार है। आशा है, इन्हें पाठक खूब पसन्द करेंगे।

वर्ष 4 : मई 1953 : अंक 9

सेवा का महत्व

दो भक्तों के मन में थी यह
बहुत दिनों से आशा—
तीर्थ पण्डरी में विट्ठल के
दर्शन की अभिलाषा ।

बहुत जतन से राह-खर्च भी
जुटा लिया दोनों ने ।
शुभ-साइत में चले पण्डरी-
पुर को पुण्य कमाने ।

मिला राह में एक आदमी
पड़ा धूल में बेसुध;
व्याधिग्रस्त वह था कराहता,
दुस्सह पीड़ा बेहद ।
उसे देख कर उपजी करुणा
एक भक्त के मन में ।
बोला—'कैसे छोड़ चलें हम,
रोगी को निर्जन में ?'
बोला उसका मित्र—'अरे, यह
कैसी सूझी [illegible] को ?
चाहो तो तु[illegible] लेकिन
आगे बढ़[illegible] मुझ[illegible] को ।'

पहला भक्त वहीं पर ठहरा,
बढ़ा दूसरा आगे ।
सोचा उसने—'मरते रहते
कितने रोज़ अभागे ।'
पहले ने रोगी की सेवा
में निज चित्त लगाया ।
उसे उठा ले गया गाँव में
और इलाज कराया ।
इधर दूसरा भक्त पण्डरी-
पुर पहुँचा खुश होकर ।
लेकिन विस्मय! उसका साथी
था पहले ही हाजिर !

वैरागी

जब उसने पुकारना चाहा
मित्र हो गया गायब ।
मिला मित्र से जाकर पहले
चकित भक्त लौटा जब ।

बोला मित्र—'वहीं से मैंने
राह गाँव की नापी ।'
तब समझा वह भक्त कि सेवा
जो न करे, वह पापी ।

मुख-चित्र

★

कृष्ण और बलराम ने अपनी शिक्षा-दीक्षा पूरी करने के बाद गुरु से कुछ दक्षिणा माँगने को कहा था। तब उनके गुरु ने दक्षिणा के रूप में अपने मृत-पुत्र के लिए पुनर्जीवन माँगा था और गुरु के इच्छानुसार कृष्ण ने उनके मृत-पुत्र को पुनर्जीवित कर मृत्यु-लोक से लौटा ला दिया था।

यह वृत्तांत माता देवकी भी जानती थीं। इसलिए जब एक बार उन्हें कंस द्वारा निहत अपने पुत्रों की याद आई और बहुत दुख हुआ, तो उन्होंने भगवान कृष्ण को बुला कर कहा—'बेटा! मैं जानती हूँ कि तुम लीलामय भगवान हो और भूमि का भार हरने के लिए ही मेरी कोख से पैदा हुए हो। मैं यह भी जानती हूँ कि तुम्हारे लिए दुस्साध्य कुछ भी नहीं है; क्योंकि तुम अपने गुरु के मृत-पुत्र को मृत्यु-लोक से पुनर्जीवित कर लौटा लाए थे। तुम्हें अपने भाइयों की, जिन्हें कंस ने अकारण मार डाला था याद होगी ही। क्या तुम उन्हें जिला कर मेरी छोटी सी कामना पूरी नहीं करोगे?'

माता की बिनती सुनते ही भगवान कृष्ण सुतल-लोक गए। उस लोक के अधिपति इन्द्रसेन ने उन का बड़ा आदर किया और कहा—'हे भगवन! आज मैं धन्य हो गया। आप के दुर्लभ दर्शन से मेरा जन्म पावन हो गया। कहिए, मैं आप की क्या सेवा कर सकता हूँ?' तब भगवान ने कहा—'भैया! स्वायंभुव मन्वंतर में छः कुमार पैदा हुए, जो बाद को शाप-वश राक्षस-जन्म लेकर हिरण्यकश्यप के पुत्र बने। वे ही फिर मेरे भाई बन कर पैदा हुए और कंस के द्वारा मारे जाकर इस लोक को प्राप्त हुए। माँ उनकी याद कर रही है। इसलिए मैं उन्हें यहाँ से ले जाना चाहता हूँ। मेरी कृपा से उनका शाप छूट जाएगा।' तुरन्त स्मर, उद्गीथ, परिष्वंग, क्षुद्रभृ और घृणि नाम के वे छहों कुमार वहाँ लाए गए। भगवान कृष्ण ने उन्हें ले जाकर माता देवकी को सौंप दिया। अपने मृत-पुत्रों को फिर से गले लगा कर माता के आनन्द का ठिकाना न रहा।

सफल-यात्रा

एक बार बोधिसत्व ने काशी-नगरी में एक व्यापारी-घराने में जन्म लिया। [illegible] पांच सौ गाड़ियों में माल लाद कर [illegible] परदेश जाकर व्यापार किया करता था [illegible]

उसी नगरी में और एक व्यापारी था [illegible] बड़ा मूरख था; मगर उसे अपनी बुद्धि का बड़ा गर्व था। एक बार जब बोधिसत्व परदेश जाने के लिए अपनी गाड़ियों को तैयार करने लगा तो दूसरे व्यापारी ने कहा—'मैं भी चलना चाहता हूँ।' तब बोधिसत्व ने कहा—'मित्र! हम दोनों के एक साथ जाने में बहुत सी कठिनाइयाँ हैं। इसलिए एक के बाद दूसरे का जाना ही अच्छा होगा। बोलो! पहले तुम जाना चाहते हो कि मैं ही जाऊँ? तुम अपनी सहूलियत विचार कर जवाब दो!' बोधिसत्व की बात सुन कर उस दूसरे व्यापारी ने सोचा—'पहले जाने से मेरे दल-वालों को सावी [illegible] ज़रियाँ मिलेंगी। बैलों को हरी-भरी [illegible] गी। मीठा, साफ पानी मिलेगा। [illegible] मैं मन के मुताबिक कर सकूँगा। [illegible] हले जाने में ही फायदा है।'

इधर बोधिसत्व ने सोचा—'बनी-बनाई राह पर चलने में ही आसानी होगी। पहले गए हुए बैलों की चरी जमीन पर फिर से नई घास लहलहा उठेगी। जहाँ जहाँ पानी नहीं मिलता वहाँ वहाँ पहले जाने वालों को कुएँ खोदने पड़ेंगे। उन कुओं से पीछे जाने वाले लाभ उठा सकेंगे। परदेशियों से सौदा करने में बड़ी मुश्किल होती है। पीछे जाने से इसमें भी सहूलियत होगी। क्योंकि पहले जाने वालों ने मोल-भाव पहले ही तय कर रखा होगा।' यह सोच कर बोधिसत्व ने कहा—'अच्छा, मैं पीछे ही जाऊँगा।'

दिनेश

इन दोनों व्यापारियों का गम्य-स्थान साठ योजन से भी ज्यादा दूर था। बीच में एक विस्तृत मरु-स्थल था। कोसों तक तपते बालू के सिवा और कुछ न दिखाई देता था। इसलिए उस ओर जाने वालों को सिर्फ रसद ही नहीं, पानी, ईंधन वगैरह सब कुछ लाद कर ले जाना पड़ता था।

दूसरा व्यापारी सारा प्रबन्ध करके यात्रा करने निकला और कुछ दिन बाद मरु-स्थल में पहुँचा। वहाँ थोड़ी दूर जाने के बाद उसे सामने से एक अपूर्व रथ आता दिखाई दिया। उस रथ में सफ़ेद घोड़े जुते हुए थे। अन्दर एक राज-वंशी पुरुष बैठा था। उसके पीछे और भी कुछ लोग थे। वे सभी कीमती कपड़े पहने हुए थे। उन लोगों को देखने से साफ़ पता चलता था कि बारिश में भींग कर चले आ रहे हैं। रथ के पहियों पर कीचड़ की निशानियाँ थी। उस राज-वंशी पुरुष के हाथों में ताजे अधखिले कमल के फूल थे।

रथ पर चढ़े हुए उस व्यक्ति ने मूरख व्यापारी को रोक कर बातों के सिलसिले में कहा—'भई! क्या बताएँ, कैसी वर्षा हुई! सच मानो, सारा जङ्गल पानी से भर गया। कहीं ज़मीन नज़र आती ही न थी! हाँ, तुम भी तो उसी ओर जा रहे हो। फिर कुप्पों में पानी क्यों ले जा रहे हो?'

अफसोस, नादान व्यापारी ने उस व्यक्ति की बातों को सच मान लिया और कुप्पों के मुँह खुलवा कर सारा पानी फिंकवा दिया। फिर वह आगे बढ़ कर बहुत दूर तक चला गया। लेकिन उसे न वह जङ्गल ही दिखाई दिया और न वर्षा की कोई निशानियाँ ही। उस व्यापारी के दल वालों को प्यास लगने लगी। लेकिन पानी की एक बूँद भी न थी। सब लोगों का गला सूखने

लगा और वे सभी एक एक कर उस भीषण मरु-स्थल में पानी की बूँद भर को तरस तरस कर मरने लगे। इतने में वे भूत जिन्होंने राज-पुरुष और उसके अनुयाइयों के रूप में इन अभागे यात्रियों को बहकाया था, दौड़े आए और मजे में इन सब को हड़प जाने लगे। थोड़ी देर बाद वहां हड्डियों की ढेरियों के अलावा कुछ भी बच न रहा। हां, गाड़ियां पड़ी रह गईं; गाड़ियों पर लदा हुआ माल वैसे ही रह गया।

कुछ दिन बाद बोधिसत्व भी उसी ओर रवाना हुआ। माल और रसद लाद कर कुप्पों में पानी भर कर, सारा इन्तज़ाम कर लिया गया था। मरु-स्थल के नज़दीक पहुँचने के बाद बोधिसत्व ने अपने दल वालों से कहा—'भाइयो! मुझ से कहे बिना बूँद भर भी पानी बेकार गिराना नहीं। नहीं तो अनर्थ हो जायगा।'

मरु-स्थल के बीच पहुँचने पर फिर वही रथ पर चढ़ा हुआ राज-पुरुष सामने से आता दिखाई दिया। उसको देखते ही बोधिसत्व सारी बात ताड़ गया। इस बार भी उस मायावी-पुरुष ने बोधिसत्व को बहकाने और कुप्पों में का पानी फिकवा

देने की कोशिश की। लेकिन बोधिसत्व ने कहा—'ताज़ा पानी दिखाई तो दे पहले! फिर बासी पानी फेंक देने में कितनी देर लगती है!' अपनी कोशिश बेकार जाती देख कर मायावी-पुरुष अनुयाइयों के साथ चुपके वहां से खिसक गया।

लेकिन उस मायावी की बातों पर कुछ भोले-भाले गाड़ी वालों ने विश्वास कर लिया था। वे आपस में कहने लगे—'नाहक यह पानी वहां तक क्यों ढो ले जाएँ? फेंक देने से कम से कम बैलों का बोझ तो हलका हो जायगा!'

तब बोधिसत्व ने उन लोगों से कहा—'तुम लोग कैसे नासमझ हो? कभी सुना है कि मरुस्थल में कहीं पानी बरसा है? किसी के बदन को ठण्डी हवा लगी थी? बादल का एक छोटा टुकड़ा भी किसी की नज़र में आया? बिजली चमकती देखी किसी ने? मान लिया कि उस आदमी का कहना सच है! तो बताओ, बादलों की गड़-गड़ाहट कितनी दूर सुनाई देती है? किसी ने सुनी भी थी?'

इन सवालों का वे सभी कुछ भी जवाब न दे सके। फिर चूँ तक न की।

बोधिसत्व ने कहा—'सुनो भाइयो! वे लोग आदमी नहीं थे। वे तो मनुष्य-रूप में भूत थे। हम लोगों ने उनकी बात सच मान कर पानी फेंक दिया होता तो आगे जाकर प्यास से तरस तरस कर मरना पड़ता। फिर हम सब को निगल जाने में कितनी देर लगती! हाँ, पानी की एक बूँद भी बेकार न जाने देना।'

इस तरह बहुत दूर तक जाने के बाद बोधिसत्व को मूरख व्यापारी की गाड़ियाँ पड़ी दिखाई दीं। उन पर लदा हुआ माल किसी ने छुआ तक नहीं था। हाँ, नज़दीक ही हड्डियों की ढेरियाँ लगी हुई थीं।

तब बोधिसत्व ने अपने अनुयाइयों से कहा—'देख लिया! बिना सोचे-समझे हरेक बात पर झट से विश्वास करने का यही नतीज़ा होता है!'

सबेरा होते ही व्यापारी का माल भी अपनी गाड़ियों पर लाद कर वे लोग सुख से चले और अपने गम्य-स्थान पर पहुँच गए। बोधिसत्व की दूर-दर्शिता के कारण उनकी यात्रा सफल हुई। सच है, नीति-कुशल नेता के अनुयाइयों को कभी किसी तरह का कष्ट नहीं होता।

5

लेकिन उसके मन को चैन नहीं था। हर रोज़ रात को वह एक सपना देखता था। सपने में एक आदमी उससे कहता था—'बेटा भानु! क्या तू मेरी आत्मा को शान्ति नहीं पहुँचाएगा? बेटा! मेरी आत्मा को शान्ति नहीं पहुँचाएगा?'

बेचारे चित्र-भानु की समझ में नहीं आया कि क्या किया जाय? क्योंकि ज्यों ज्यों दिन बीतते जा रहे थे, त्यों-त्यों सपने में दिखाई देने वाले उस आदमी की दीनता और व्यग्रता बढ़ती ही जा रही थी।

पहले तो चित्र-भानु ने इस ओर कुछ ध्यान नहीं दिया। उसने सोचा—'सपना ही तो है!' लेकिन जब हर रोज़ वही सपना दिखाई देने लगा तो उसके मन में कारण जानने की इच्छा प्रबल हो उठी।

आखिर उसने अपने गुरु से सारा माजरा कह दिया और पूछा—'इस में कौन सा भेद छिपा हुआ है?'

तब मित्रानन्द ने कहा—'बेटा! इस में एक बहुत बड़ा भेद छिपा हुआ है। सुनो—' और यों कहना शुरू किया—'किसी समय देवराज इन्द्र की सभा में एक गन्धर्व रहा करता था। उसके दो पत्नियाँ थीं। हर एक पत्नी से उसके एक एक लड़का था।

वह गन्धर्व इन्द्र की सभा में नौकर था। उसकी नौकरी की मीयाद बीस साल थी। मीयाद पूरी होते ही नौकरी उसकी सन्तान

को मिलती। निस्सन्तान होने पर वही बीस साल और नौकरी कर पाता। यह उस नौकरी का कायदा था।

हाँ, तो उस गन्धर्व की नौकरी की मीयाद पूरी होने को आई। कायदे के मुताबिक नौकरी उसके बड़े लड़के को मिलनी चाहिए थी। लेकिन छोटी पत्नी चाहती थी कि नौकरी सौत के लड़के को न मिले; उसी के लड़के को मिले।

छोटी थी भी बड़ी सयानी। पति को रिझाना उसके लिए कोई मुश्किल काम न था। उधर बड़ी का लड़का बड़ा भोला-भाला था। उसके लिए माँ और चाची दोनों बराबर थीं। यह उसकी सौतेली माँ अच्छी तरह जानती थी। इसलिए एक दिन उसने उसे बुला कर कहा—'बेटा! मैं एक व्रत करना चाहती हूँ। उस व्रत में सभी देवताओं को बुलाना है। संसार में जितने तरह के फूल होते हैं, सब से उनकी पूजा करनी है। फूल तो सब तरह के मिल गए। लेकिन नीला गुलाब कहीं न मिला। उसके बिना काम कैसे चलेगा! इसलिए बेटा! किसी न किसी तरह नीला गुलाब ला दो। जाओ; तुम्हारी माँ को समझा देने का जिम्मा मैं लेती हूँ।' इस तरह उसने सौतेले लड़के को नीला गुलाब लाने भेज दिया।

उस दिन जब बड़ी देर होने पर भी बेटा वापस नहीं आया तो बड़े की माँ बहुत व्याकुल हो गई। तब उसकी सौत ने वहाँ आकर कहा—'बहन! घबराओ नहीं! वह अपने मित्रों के साथ, अजीब अजीब फूल तोड़ लाने के लिए भूलोक गया है। और कोई बात नहीं।' उसकी बात सुन कर बड़ी की घबराहट कम हो गई।

इसी बीच गन्धर्व की नौकरी की मीयाद पूरी हो गई। बड़ा लड़का घर पर नहीं था। इसलिए छोटी पत्नी ने अपने ही लड़के को इन्द्र

के दरबार में भेजा। उसे ही वह नौकरी मिल गई। बस, छोटी पत्नी फूली न समाई।

सारा हाल जानने के बाद बड़ी पत्नी के मन में तरह तरह के विचार उठने लगे। वह बूझ गई कि जरूर इस में कोई न कोई भेद छिपा हुआ है। तुरन्त उसने दिव्य-दृष्टि वाले ऋषि-मुनियों से पूछ कर सच्चा हाल जान लिया। उसे मालूम हो गया कि उसका लाड़ला लड़का नीले गुलाब की खोज में जाने, कहाँ कहाँ भटक रहा है।

उधर उस अबोध बालक ने नीले गुलाब के लिए पहले दिन सारा स्वर्ग छान मारा। लेकिन जब वह दुर्लभ फूल स्वर्ग में नहीं मिला तो दूसरे दिन वह पाताल गया। वहाँ भी नहीं मिला तो एक एक कर चौदहों लोक में खोजने लगा। लेकिन कहीं उसकी आशा पूरी न हुई। अन्त में कुछ लोगों ने कहा—"हमने सुना है कि ऐसा फूल भूलोक में मिलता है। भूलोक जाओ तो शायद तुम्हारी इच्छा पूरी हो जाय।"

तब वह भोला लड़का भूलोक गया और खेतों-बाड़ियों, वनों-उपवनों आदि में सब जगह उस फूल की खोज करने लगा। उसे कई रंगों के गुलाब दिखाई दिए। लेकिन कहीं नीला गुलाब न दिखाई दिया। बेचारे बालक को बड़ी चिन्ता होने लगी कि छोटी माँ का व्रत इस फूल के बिना अधूरा ही रह जायगा। वह भूख-प्यास भी भूल कर उस फूल की खोज में लगा रहा।

इधर सच्चा हाल जान कर बड़ी पत्नी अपनी सौत पर आग-बबूला हो गई। बोली—"री कलमुँही! तेरे ही कारण मुझे अपने लड़के से बिछुड़ना पड़ा। न जाने, मेरा मासूम बच्चा, जिससे मुझे देखे बिना एक पल भी न रहा जाता था, कहाँ कहाँ भटक रहा है! न जाने, किन बिरानी गलियों की खाक छान रहा है! जा, मैं तुझे शाप

देती हूँ। मेरी तरह तुझे भी अपने लड़के से बिछुड़ना पड़ेगा। जिस भूलोक में मेरा लड़का भटक रहा है, उसी भूलोक में तुम्हें भी जाकर भटकना पड़ेगा। भूलोक जाकर तू एक राजा की पत्नी बनेगी और तेरा लड़का वहाँ फिर तेरी कोख से जनम लेगा। जिस तरह नीले गुलाब के बहाने तूने माँ-बेटे को अलग कर दिया, उसी तरह तुम दोनों को भी एक दूसरे से बिछुड़ कर, रो-रोकर दिन काटने पड़ेंगे!" बड़ी पत्नी ने अपनी सौत को शाप दिया और लड़के को ढूँढ लेनेके लिए तुरन्त अपनी सखियों को भूलोक भेजा।

छोटी पत्नी जानती थी कि बड़ी का शाप अमोघ है। इसलिए वह तुरन्त अपनी सौत के पैरों पड़ कर गिड़गिड़ाने लगी। उदार स्वभाव की होने के कारण बड़ी ने तुरंत उसे माफ भी कर दिया और शाप से मुक्त होने का उपाय बता कर चली गई।

जब सांझ को गन्धर्व ने इस शाप की बात सुनी तो अपनी लाड़ली छोटी पत्नी को ढाढ़स बँधा कर बोला—'जो हो गया, सो हो गया। अब पछताने से कोई फायदा नहीं। चिंता मत करो, भूलोक में भी मैं तुम्हारी खैर-खबर लेता ही रहूँगा।'

शाप के कारण गन्धर्व की छोटी पत्नी स्वर्ग की सारी सुध भुला बैठी और अदृश्य हो गई। उसका बेटा भी माँ की ही तरह अदृश्य हो गया। यही गन्धर्व-रमणी, जो स्वर्ग-लोक से अदृश्य हो गई थी, मानवी का रूप धारण कर पृथ्वी पर एक उपवन में जा उतरी। उधर गन्धर्व ने अपने गले की माला में से दस मोती निकाल कर उन्हें दस दासियों का रूप दिया और एक वीणा देकर उन्हें अपनी पत्नी के पास भेजा।

यों वह गन्धर्व-रमणी जिस उपवन में जा उतरी, वह मलाण के राजा हर्षपाल का था।

वह उस समय अविवाहित था और ब्याह का नाम लेते ही झल्ला उठता था। इसलिए राज के बड़े-बूढ़ों ने मेरे पास आकर किसी तरह उस का मन बदलने की प्रार्थना की। मैने उनको एक मन्त्रित फल दिया जिसे राजा को अनजाने खिला दिया गया।

राजा ने जिस दिन यह फल खाया उसी दिन गन्धर्व-रमणी उपवन में आ उतरी थी। उस रात अचानक नींद टूटी तो राजाको वीणा की मनोहर धुन सुनाई दी। वह तुरन्त उठ कर उपवन में गया। वहाँ गन्धर्व-रमणी को देखते ही वह मुग्ध हो गया। हर्षपाल ने, जो ब्याह का नाम लेते ही बिगड़ जाता था, राजी-खुशी उस गन्धर्व-रमणी को अपनी रानी बना लिया।

ब्याह हो जाने के बाद राजा हर्षपाल को उस मन्त्र-फल का भेद मालूम हुआ। लेकिन मालूम होने से भी अब क्या हो सकता था? वह अपनी नववधू को खूब चाहता भी था। इसलिए उसे कुछ भी पछतावा न हुआ।' इतना कह कर नित्यानन्द ने गन्धर्व-रमणी की कोख से महीपाल के जन्म लेने, फिर राजा के मन्दाकिनी से ब्याह करने और उसकी कोख से अर्धपाल के पैदा होने तक का वृत्तांत सुनाया और कहने लगे—'कुछ दिन बाद मन्दाकिनी की नीयत बदल गई। वह सौतिया डाह और राज्य-लोभ के मारे महीपाल को बहुत तङ्ग करने लगी। यहाँ तक कि गन्धर्व-रमणी से अपने बेटे की दुर्दशा न सही गई। उसने अपनी सखियों के साथ सलाह-मशविरा करके सोचा—'मैं लाचार हूँ। सौत का अत्याचार देख कर भी जबान तक नहीं हिला सकती। मेरे यहाँ रहने के कारण मेरे मासूम लड़के की और भी दुर्गत हो रही है। चुपचाप कहीं चली जाऊँ तो वह शायद कुचक्र रच कर अपने

लड़के को गद्दी पर बिठाने की कोशिश करेगी! अच्छा, जो होगा देखा जायगा। मैं चुपचाप कहीं चली जाऊँगी और छुप कर सारी करतूतें देखती रहूंगी!'

इतना निश्चय करके गन्धर्व-रमणी अपने लड़के को छोड़ कर एक गुप्त-प्रदेश को चली गई। उसकी सखियों ने पहले ही वहाँ पहुँच कर सारा इन्तजाम कर रखा था। बेटे की चिन्ता तो थी; फिर भी गन्धर्व-रमणी के दिन वहाँ बड़े सुख से कटने लगे।

उधर अपने ही लड़के को गद्दी पर बिठाने का इरादा करके उसकी सौत मन्दाकिनी अपने पिता और राज-गुरु के साथ मिल कर षड्यन्त्र रचने लगी। इतने में राज में अकाल टूट पड़ा तो उसने उस बहाने सौत के लड़के से पिंड छुड़ा लेना चाहा।

उधर गन्धर्व जो पृथ्वी पर अपने पूर्व-जन्म की पत्नी के सारे दुख देख रहा था, एक बूढ़े का रूप धर कर उसके गुप्त-निवास पर पहुँचा। उसने उसे समझा-बुझा दिया और एक सुनहले हंस का रूप धारण करने की शक्ति दी। इतना ही नहीं, उसने उसकी दसों सखियों को मोती बना लिया और फिर अपनी माला में पिरो लिया।

सुनो—उसके बाद क्या हुआ! ठीक समय पर हंस-रूप में गन्धर्व-रमणी अपने लड़के को बलि-वेदी पर से उड़ा ले गई। बस; मन्दाकिनी डर के मारे ज़हर खाकर मर गई। हर्षपाल ने राज-गुरु को दोषी ठहरा कर उसे राज से निकाल दिया। वह जाकर किरात-राज के पुत्र मन्द्रपाल से शरीक होकर षड्यन्त्र रचने लगा। इधर किरात-राज ने अर्थपाल को पाल-पोस कर बड़ा किया। उसका ब्याह भी हो गया। इसी अर्थपाल के चित्र-भानु नाम का एक लड़का पैदा हुआ।' यों मुनि मित्रानन्द और भी कुछ कहने जा

रहे थे कि चित्र-भानु ने चकित होकर उन्हें टोका और पूछा—'क्या कहा! चित्र-भानु!'

मित्रानन्द ने जवाब दिया—"हाँ, भैया! हाँ; तुम्हीं चित्र-भानु हो! मल्हाण का सिंहासन तुम्हारा है। यह सुन कर तुम्हें शायद बहुत अचरज होता होगा। उसी विश्वास-घाती राज-गुरु के कारण तुम्हें राज-गद्दी से वञ्चित होना पड़ा।" इतना कह कर मुनिवर ने राज-गुरु के विश्वास-घात का सारा वृत्तांत सुना दिया। फिर कहने लगे—'हाँ, सुनो बेटा! उस दिन जब महीपाल की माता उसे हंस के रूप में उड़ा ले जाने लगी तो बेचारे को बड़ी हैरानी हुई। लेकिन मन ही मन खुशी भी हुई। उसने सोचा—'मैं बलिवेदी से सीधे माता की गोद में पहुँच गया। धन्य है भगवान की लीला!' वह सुनहला हंस नीले आसमान में उड़ते हुए अनेकों नदी, जङ्गल और पहाड़ पार कर एक द्वीप में जा उतरा। उस द्वीप का नाम मंजुल-द्वीप था। उस द्वीप के राजा का नाम तपोधन था।

बस, पल में राजा तपोधन को खबर लग गई कि रत्न-किरीट-धारी एक राजकुमार सुनहले हंस पर चढ़ कर उसके द्वीप में आ उतरा है। राजा को बहुत आश्चर्य हुआ। उसने सोचा—'हो न हो, यह बालक जरूर देवताओं का प्रसाद है।' वह बड़ी उतावली के साथ तुरन्त पैदल ही उस जगह जा पहुँचा।

हंस-रूपिणी गन्धर्व-रमणी ने राजा से अपने लड़के की कहानी कह सुनाई। मनुष्य की बोली में बोलने वाले उस हंस को देख कर राजा और भी चकित हो गया।

'राजन्! इस दुध-मुँहे बच्चे को मैं तुम्हें सौंपती हूँ। इसे आज से अपनी ही संतान मान लेना।' यह कह कर वह सुनहला हंस आसमान में उड़ गया। गन्धर्व-रमणी शाप-मुक्त होकर अपने लोक को चली गई।

देवताओं की कृपा से मिले हुए उस बच्चे को राजा तपोधन बड़े लाड़-प्यार के साथ पालने लगा। धीरे-धीरे लड़का सयाना हो गया। राजा ने अपनी इकलौती बेटी से उसका ब्याह भी धूम-धाम से कर दिया।

लेकिन बेचारे महीपाल की जिन्दगी की यह बहार ज्यादा दिन न रही।

क्योंकि अड़ोस-पड़ोस के बहुत से राजाओं को गुप्तचरों के द्वारा मालूम हो गया कि अमूल्य रत्न-मुकुट मंजुल-द्वीप पहुंच गया है। उनमें से एक राजा ने मंजुल-द्वीप पर चढ़ाई करने की भी ठान ली। जब यह खबर महीपाल को मालूम हुई तो उसे बहुत खेद हुआ। उसने सोचा—'माँ ने संकट से बचाने के लिए मुझे यहाँ पहुँचाया और राजा तपोधन को सौंप दिया। महाराज ने भी मेरे लिए कोई बात उठा न रखी। यहाँ तक कि मुझे अपना दामाद भी बना लिया। फिर भी मेरे मन को चैन नहीं है। न जाने, मलाण में मेरे बूढ़े पिता का क्या हाल है और मेरी माँ अन्तर्धान होकर न जाने, कहाँ चली गई? सारे अनर्थ का मूल, यह रत्न-मुकुट मेरे पल्ले पड़ गया है। अब तो अन्य राजाओं का ध्यान भी इसकी ओर आकर्षित हो गया है। वे क्या चुप बैठने वाले हैं? कहीं वे सचमुच चढ़ बैठे तो कौन कह सकता है कि नतीजा क्या होगा? मुझे अपनी कोई चिंता नहीं। हाँ, इस रत्न-मुकुट को सुरक्षित रखना अनिवार्य है। इस हालत में इसके अलावा और कुछ नहीं किया जा सकता।'

यह निश्चय कर महीपाल एक घने जङ्गल में घुस गया। बीच जङ्गल में, जहाँ आदमी की पहुँच भी मुश्किल थी, उसने एक पेड़ की डाल पर रत्न-मुकुट को जतन से छुपा दिया और लौट गया। उसके बाद—

[सशेष]

सत्य-वादी

राजपूर एक छोटा सा गाँव था जिस में ज्यादातर अहीर ही रहते थे। वे सभी नज़दीक की बस्ती में जाकर, दूध-घी बेच कर अपनी जीविका चलाया करते थे। इसलिए हरेक के पास कई गाय-भैंस थीं।

इस तरह उस गाँव में जितने ग्वाले थे सभी खूब पैसा कमाने लगे और धीरे धीरे मालदार बन गए। इस में एक राज़ छुपा हुआ था। वह यही कि ये सभी दूध में पानी मिला कर बेचा करते थे। कोई पूछता तो कहते—'अजी साहब! क्या कहते हैं! देख लीजिए! कैसा खालिस दूध है!' जब गाँव के सभी ग्वालों का यही हाल था तो बेचारे खरीदने वाले करते क्या? बस, उसी पानी मिले दूध से काम चला लेते और चूँ तक न करते।

हाँ, राजपूर में ही भोलानाथ नाम का एक ग्वाला था, जो कभी दूध में पानी नहीं मिलाता था। उसके पास दो ही गायें थीं जो कुल आठ सेर दूध रोजाना देती थीं। बेचारे भोला ने कभी झूठ बोलना नहीं सीखा था। दुहा हुआ दूध [illegible] सा ले जाकर बेच दिया करता था। इसलिए उसके ग्राहकों का उस पर बहुत भरोसा था और वे सभी उससे बहुत खुश थे।

अन्य ग्वालों की तरह धोखा न देने और झूठ न बोलने के कारण बेचारे भोला को बहुत नुकसान उठाना पड़ा। क्योंकि दाम तो उसके दूध का भी वही मिलता था जो दूसरों के पानी मिले दूध का। ग्राहक उसके दूध को सराहते तो बहुत थे, मगर दाम उतना ही देते थे। हाँ, बहुत होता तो दूसरों से एक आना सेर ज्यादा देते। इसलिए बेचारे भोला को इस रोजगार में उतना ज्यादा नफा नहीं होता था जितना कि दूसरों को। क्योंकि दूसरे लोग तो आधा

रामसहाय मिश्र

पानी मिला कर बेच लेते थे। यों किसी तरह भोला का खाना-कपड़ा तो चल जाता था; लेकिन बचत कुछ नहीं होती थी। जो कुछ मिलता वह गायों के चारे-पानी और पालन-पोषण में खर्च हो जाता।

उधर यह हाल था कि दूसरे ग्वालों की घर-वालियां हर साल नए नए गहने बनवाती थीं; हर महीने नई नई साड़ियाँ खरीदती थीं। पिछले साल जिस की फूस की झोंपड़ी भर होती, साल खतम होते होते उसका पक्का मकान बन जाता। हाँ, बेचारा भोला जैसे का तैसा रह गया। उसकी हालत में कोई सुधार नहीं हुआ।

भोला की घर-वाली इन सब बातों पर विचार करके मन ही मन घुलने लगी। यहाँ तक कि अपनी फटी-चिटी पुरानी साड़ियाँ पहन कर पड़ोसिनों के सामने जाने में भी उसे शरम आने लगी। आखिर एक दिन उसने अपने पति से कहा—'हमें भी अब दूध में पानी मिलाना ही पड़ेगा। नहीं तो हमारी हमेशा यही हालत रहेगी। देखूंगी, कल से दूध में पानी कैसे नहीं मिलाते हो!'

जब घर-वाली रूठ जाय तो बेचारे पति-देव करें क्या! आखिर भोला ने कहा—'अच्छा, दूध में पानी तो मिला दूँगा। लेकिन ग्राहकों के पूछने पर मुझसे झूठ तो नहीं बोला जायगा। बस, सच्ची बात बता दूँगा।' भोला की पत्नी ने पति के मन की बात जान ली। वह बोली—'ठीक है, झूठ बोलने की कोई जरूरत नहीं। मैं जैसा कहूँ, वैसे करना! बस, हमें भी कल से रोजगार में खूब नफा होने लगेगा।' यह कह कर उसने पति को एक उपाय बता दिया जो उसे भी पसंद आ गया।

दूसरे दिन भोला बड़े तड़के उठा और दूध बेचने शहर गया। हमेशा की तरह

दूध गाढ़ा न देख कर ग्राहकों की पर-वालियाँ भोला से कहने लगीं—'क्यों भैया! अन्त में तुम्हारी भी नीयत डोल गई। दूध में पानी मिला लाए हो! बड़े सत्यवादी हरिश्चन्द्र बनते फिरते थे!' भोला उन सब से कहने लगा—'कसम खाकर कहता हूँ भैया! मैंने दूध में पानी नहीं मिलाया।' तब वे सब कहने लगीं—'वाह भैया! तुम भी खूब सीख गए! चोरी फिर सीनाजोरी!' भोला बोला—'भैया! मैं कभी झूठ नहीं बोलता। सच सच कहता हूँ, मैंने दूध में पानी नहीं मिलाया।'

अन्त में बहुत से लोग जमा हो गए। कुछ लोगों ने क्रोध के साथ कहा—'अरे भई! चुप रहो; साफ तो मालूम होता है कि तुम झूठ बोल रहे हो! दूध देखने से पता नहीं चलता?' तब भोला बोला—'आप लोगों को विश्वास नहीं तो मैं जाकर अपनी घर-वाली को बुला लाता हूँ। वही सारा हाल आपको बता देगी। वही तो अन्दर जाकर हाँडी ले आई थी। कहता हूँ, मैंने दूध में पानी नहीं मिलाया! मगर आप लोगों को विश्वास होता ही नहीं! मैं क्या करूँ अब!'

अन्त में बड़ी हुज्जत करने के बाद भोला ने सच्चा हाल बता दिया। उसने कहा कि उसकी पत्नी हाँडी में पानी ले आई थी और उसने पानी में दूध मिला दिया था। इस तरह साबित हुआ कि वह सच ही बोल रहा है। उसने पानी में दूध मिलाया था; दूध में पानी नहीं। सत्यवादी भोला अपने नेम से नहीं डिगा। उसकी पत्नी ने जो उपाय बता दिया था वह खूब चल गया।

अब लोगों को सच्ची बात मालूम हो गई तो हँसते-हँसते उनका पेट फूलने लगा। हाँ, भोला के सत्यवादी होने में अब किसी को कोई शंका न रही।

चार सवाल

१. बारह बजने में कितना समय लगेगा ?

एक लड़का अपनी बहन के साथ एक जगह खड़ा था कि इतने में कहीं छः का गजर खड़का। लड़के ने अपनी कलाई की घड़ी देख कर कहा—'छः बजने में तीस सेकण्ड लगे!' 'अच्छा, तो बारह बजने में कितना समय लगेगा?' उसकी बहन ने पूछा। 'साठ सेकण्ड।' लड़के ने जवाब दिया। लेकिन बहन ने कहा—'गलत!' और सही जवाब बताया। क्या तुम भी सही जवाब बता सकते हो?

२. ग्वाले की हैरानी

एक औरत ने ग्वाले से एक सेर दूध लाने को कहा। वह एक बड़े बरतन में जिस में दो सेर आता था, दूध ले आया। उसके पास पाव की चुकड़ी नहीं थी। घरवाली के पास भी दो ही बरतन थे, जिन में से एक में पाँच पाव और दूसरे में तीन ही पाव आता था। अब तो ग्वाला हैरान हो गया कि एक सेर दूध कैसे दे? तब घरवाली के लड़के ने जो नजदीक ही खड़ा ग्वाले की परेशानी देख रहा था, उसे एक तरकीब बता दी। बूझो तो वह, तरकीब क्या थी?

३. टोकरी में आम

बारह लड़के थे और उनके बीचों-बीच एक टोकरी में बारह आम थे। हरेक लड़के ने एक एक आम ले लिया। फिर भी टोकरी में एक आम बच रहा। यह कैसे हुआ, बता सकते हो?

४. चोर और घर वाला

एक चोर पुआल चुराने आया। उसे घरवाले ने देख लिया। चोर ने भी घरवाले को देख लिया; लेकिन भागने के लिए समय नहीं था। इसलिए पुआल की ढेरी के चारों ओर चक्कर लगाने लगा। घरवाले ने उसका पीछा किया। दोनों की दौड़ ढेरी के दोनों छोरों से शुरू हुई। एक चक्कर लगाने में चोर को ४० सेकण्ड लग गए। घरवाले को ३० ही सेकण्ड लगे। क्या तुम बता सकते हो कि इस हिसाब से घरवाले को चोर को पकड़ने के लिए कितने चक्कर लगाने पड़ेंगे?

[बता न सको तो ५६-वाँ पृष्ठ देखो!]

मद्रास के किसी मुहल्ले में रामलाल और रतनलाल नाम के दो लड़के रहते थे। दोनों एक ही गली में, अगल-बगल के मकानों में रहते थे। इसलिए बचपन से ही दोनों में दोस्ती पैदा हो गई। दोनों की पढ़ाई एक ही स्कूल में और बाद को एक ही कालेज में हुई। दोनों ने पढ़ा भी एक ही दर्जे तक। दोनों पोशाक भी पहनते थे एक सी, जिस से देखनेवाले कहते थे कि दोनों जुड़वां हैं। दोनों एक दूसरे से बिछुड़ कर पल भर भी रह न सकते थे।

दोनों का शील और गुण बहुत अच्छा था और सब लोग उनकी प्रशंसा करते थे।

दोनों की थोड़ी बहुत जायदाद थी। इसलिए पढ़ना-लिखना पूरा करने के बाद नौकरी की खोज में भटकते-फिरने की नौबत दोनों को न पड़ी। चैन से घर पर ही दिन काटने लगे। ब्याह के बारे में दोनों ने क्या सोचा, कुछ पता नहीं; मगर अभी तक दोनों में किसी का ब्याह नहीं हुआ।

इसी बीच राम[illegible] के पिताजी चल बसे और रतनला[illegible] जो इतने दिनों से घर का सारा [illegible] देख रहे थे, देहात लौट गए। इसलिए एक ही बार दोनों के सर पर अपने अपने घर का सारा जंजाल टूट पड़ा। इस तरह जीवन में अनेक परिवर्तन होते आए; लेकिन इससे दोनों की दोस्ती में कोई फरक न पड़ा।

इन दोनों मित्रों को देख कर सब लोग ताज्जुब करते थे। यह अपूर्व मैत्री देख कर सब लोगों को खुशी होती थी।

ऐसी हालत में एक बार दोनों मित्रों को सरे-बाजार झगड़ते देख कर लोगों को बहुत आश्चर्य हुआ। किसी बात पर मत-भेद हो गया था और दोनों जोर जोर से

मुखराज मेहरा

मिला रहे थे। फिर सुननेवालों को अचरज क्यों न हो ! किसी को इन दोनों से ऐसी आशा न थी। रतनलाल को रामलाल की निन्दा करते देख कर सब लोग मुँह बाए देखते रह गए। 'भई ! तुम हैवान बन गए हो ! तुम्हारे जैसे लोगों के लिए ज़िन्दगी ही बोझ बन जाती है। मौत ही उनकी दवा है।' रतनलाल गुस्से में आकर कह रहा था।

रामलाल को मालूम था कि उसका दोस्त क्यों इस तरह उसे फटकार रहा है। लेकिन लोगों को, जिन्हें भेद नहीं मालूम था, दोनों को इस तरह झगड़ते देख कर बहुत अचरज हुआ।

भीड़ लगती देख कर दोनों दोस्त होश में आ गए और अपनी अपनी राह चले गए।

इस झगड़े को तीन चार दिन हो गए। मगर दोस्तों की जोड़ी कहीं न दिखाई दी। रतनलाल कभी-कभी दिखाई भी देता; मगर रामलाल तो जैसे अदृश्य ही हो गया। अड़ोस-पड़ोस में ज़ोर की काना-फूसी चली; लेकिन इस झगड़े की असली वजह किसी की समझ में नहीं आई। लोग मन ही मन तरह तरह की कल्पना करने लगे। लेकिन सत्य क्या है, वह किसी की समझ में नहीं आया।

इस झगड़े के चौथे दिन सवेरे, रामलाल के घर हर रोज़ काम करने के लिए आने वाली नौकरानी ज़ोर से चीखने लगी। बस, रतनलाल के साथ साथ और भी बहुत से लोग दौड़े आए। आकर देखा क्या ! रामलाल फ़र्श पर पड़ा हुआ था। जगह जगह लहू के जमे हुए धब्बे थे। रामलाल की छाती में एक पैनी छुरी चुभी हुई थी।

देख कर सब लोग घबरा गए। रतनलाल ने पुलिस में खबर दे दी। पुलिस वालों ने

हट आकर जाँच-पड़ताल की। कहीं किसी के आने की निशानियाँ न थीं। हाँ, खिड़की खुली हुई थी। पूछ-ताछ करने पर भी कुछ पता न चला। किसी को इस मामले की कुछ जानकारी न थी। हाँ, जिन जिन लोगों ने चार दिन पहले रामलाल और रतनलाल को झगड़ते देखा था, उन्होंने पुलिस से सभी बात कह दी। इस के अलावा पुलिस को यह भी मालूम हो गया कि रामलाल के और कोई दुश्मन नहीं है। इस से सहज ही रतनलाल पर उन्हें शक हो गया। कौन नहीं जानता कि जब जानी दोस्त झगड़ बैठते हैं तो उसका नतीजा कितना खतरनाक होता है?

पुलिसवालों ने रतनलाल का बयान ले लिया। रतनलाल ने स्वयं मंजूर कर लिया कि बचपन के दोस्त होते हुए भी वे दोनों उस दिन झगड़ पड़े थे। जब पुलिस वालों ने झगड़े की वजह पूछी तो उसने बताने से साफ इन्कार कर दिया।

इस से पुलिस वालों को उस पर और भी शक हो गया। लेकिन सबूत कुछ नहीं मिला कि उसी ने रामलाल का खून किया था। इसलिए उन्होंने उसे गिरफ्तार नहीं किया!

अब उस मुहल्ले में तरह तरह की अफवाहें फैलने लगीं। लोग आपस में कहने लगे कि एक-दो दिन में पुलिस वाले रतनलाल को गिरफ्तार किए बिना नहीं छोड़ेंगे।

बेचारा रतनलाल ऐसी अफवाहें फैलती देख कर मन ही मन चिन्ता से घुल रहा था। वह बड़े धर्म-संकट में फँसा हुआ था।

ऐसी हालत में एक रात अच्छी चाँदनी छिटक रही थी और मुहल्ले के रहने वाले लड़के सभी चाँद की सफेद रोशनी में नज़दीक के मन्दिर के अहाते में खेल रहे थे। कुछ शरारती लड़के मन्दिर पर चढ़ने और सूराखों में हाथ रख कर उन में रहने

वाले कबूतरों को पकड़ने की कोशिश कर रहे थे। इन बच्चों को देख कर बेचारे कबूतर डर के मारे पंख फड़फड़ा कर भाग रहे थे।

इतने में एक लड़के को एक सूराख में कोई कागज़ मिल गया। उसकी समझ में न आया कि कैसा कागज़ है। इसलिए चुपके से नीचे उतरा और उसे ले जाकर अपने पिता को दिखाया। उसका घर भी रतनलाल और रामलाल के घरों के नज़दीक ही था। उसके पिता ने देखा तो वह रामलाल का अंतिम पत्र था। उसमें लिखा था—

'मैं एक बुरी लत का बेतरह शिकार हो गया हूँ। बड़ी कोशिश करने पर भी उससे पिंड न छुड़ा सका। मैंने जुएँ में सारी जायदाद गँवा दी। यह बात सब से छिपा रखी। आज सारे कर्ज चुकाने पर मेरे हाथ में कानी-कौड़ी नहीं बचेगी। मेरे मित्र रतन ने मुझे कई बार समझाया। चार दिन पहले मुझे बुरी तरह फटकारा भी। बड़ी शरम आई मुझे। लेकिन करता क्या? यह दुर्दशा मुझसे और न सही गई। इसीलिए यह संसार छोड़ कर जा रहा हूँ। आशा है कि मेरा प्यारा दोस्त मुझे समझ लेगा और माफ कर देगा।'

इस पत्र की खबर पल में सारे मुहल्ले में फैल गई। जिस लड़के को यह पत्र मिला था उसके पिता ने उसे पुलिस में दे दिया। साबित हो गया कि लिखावट रामलाल की है और उस ने आत्म-हत्या कर ली थी।

लोग सभी शरमाने लगे कि उन्होंने नाहक रतनलाल पर शक किया। अब सब की समझ में आ गया कि रामलाल ने आत्म-हत्या कर लेने के पहले एक पत्र लिख कर, निकट ही रख दिया था, जिसे बाद को एक कबूतर ने ले जाकर अपने घोंसले में छुपा लिया।

इस तरह पंछी के उस पत्र ने एक आदमी की जान बचाई।

साधू का धर्म

[रामवचनसिंह "आनन्द"]

एक बार थे इक साधूजी
नद में मस्त नहाते।
नया, मनोरम प्रात देख, झुक,
प्रभु का थे गुण गाते!

उसी समय धारा में बिच्छू
पड़ा दिखाई बहता।
कभी डूबता, उतराता फिर,
बेहद दुख था सहता!

बाबाजी से रहा गया ना,
उनका मन था कोमल!
किया जतन रक्षा का ही, बस,
चाहा उसका मंगल!

पर बिच्छू तो बिच्छू ही था,
डंक चुभाया फौरन।
बाबा काँपे, छूट गिरा वह
फिर पानी में तत्क्षण!

लेकिन बाबाजी ने उसको
फिर से झपट बचाया।
फिर भी अपनी शठता से वह
बिच्छू बाज न आया!

बार-बार बाबाजी उसको
जल से उठा बचाते।
किन्तु कसाई बार-बार वह
जाता डंक चुभाते!

आखिर बाबाजी मूर्च्छित हो
गिरे नदी के जल में।
तट के लोगों ने उनको झट,
दौड़ बचाया पल में!

बोले लोग-'व्यर्थ ही क्यों उस
खल के प्राण बचाते!'
बाबा बोले—'बहुत ठीक है
आप लोग समझाते!

डंक मारना धर्म दुष्ट का
वह निज धर्म निभाता।
धर्म मनुज का पर-सेवा, क्यों
उसे न कहो, बचाता?'

सैकड़ों साल पहले अरावली-पर्वत-माला पर एक चट्टान ऐसी अजीब शकल की थी जिस को देखने से मालूम होता था, मानों किसी मूर्तिकार ने बड़े जतन से मनुष्य का मुँह [illegible] हो। लेकिन वास्तव में उसे किसी मूर्ति[illegible] ने नहीं गढ़ा था। वह विचित्र मुख प्राकृतिक था। उस पहाड़ के आस-पास जितने गाँव थे उनके रहने वाले हर रोज उस मुख को देखा करते थे। उनको उस मुख में उदारता, करुणा, शान्ति आदि अनेक विभिन्न भाव गोचर होते थे। उस मुख का माथा अत्यन्त विशाल था और बुद्धि की प्रखरता को सूचित करता था। बड़ी बड़ी आँखों से मानों प्रीति और करुणा टपकी पड़ती थी।

उस विचित्र शिला-मुख के बारे में लोगों में तरह तरह की किंवदंतियाँ प्रचलित थीं। लोग कहा करते थे कि किसी समय ऐसी ही सूरत वाले एक महात्मा रहते थे जिन के कारण लोगों की बहुत भलाई हुई थी। कुछ दिन पहले जब एक बार एक मुनिवर [illegible] पहाड़ पर रहने आए तो आस-पास के [illegible]ने वाले सैकड़ों लोग उनके [illegible]ए। उन में से कुछ लोगों ने उस [illegible]-मुख के बारे में मुनिवर से सवाल किया। तब थोड़ी देर तक उस मुख की तरफ देख कर मुनिवर ने कहा—'भविष्य में इसी शिला-मुख से मिलती-जुलती सूरत वाला एक व्यक्ति इस ओर आएगा। वह बड़ा ही ज्ञानी और धर्मात्मा होगा। उसके जरिए लोगों का बहुत उपकार होगा।'

उस दिन से जब जब कोई नया आदमी उस तरफ आता, आस-पास के रहने वाले उसके मुख की तरफ गौर से देखने लगते। लेकिन अंत में सब को निराशा ही होती। क्योंकि कोई भी ऐसा आदमी उस ओर नहीं आया जिस का मुँह उस शिला-मुख से मिलता-जुलता हो।

रूपकुमार

इस तरह बीसों साल बीत गए। मुनिवर की भविष्य-वाणी पीढ़ी-दर-पीढ़ी लोगों तक पहुँचती आई। मगर बहुत से लोगों का उस पर विश्वास न रहा। कुछ लोग तो उसे निरी कपोल-कल्पना ही समझने लगे।

लेकिन एक लड़का ऐसा था जिस का उस भविष्य-वाणी में विश्वास बना ही रहा। उसका नाम वसु था। बचपन में ही उसके दादा ने उसे गोदी में खेलाते वक्त शिला-मुख का किस्सा सुनाया था और मुनिवर की भविष्य-वाणी के बारे में भी बताया था। वसु के बाल-हृदय पर इसका गहरा प्रभाव पड़ा। बारंबार उसे मुनिवर की भविष्य-वाणी याद आती रही। उसका प्रगाढ़ विश्वास था कि भविष्य-वाणी उसके जीवन-काल में ही सफल होगी।

हाँ, तो ऐसा हुआ कि एक दिन एक सन्यासी वसु के गाँव आया। लोगों ने कहा—'ये बड़े ज्ञानी महात्मा हैं; शास्त्रार्थ में इन्हें कोई नहीं जीत सकता। उपनिषद, तर्क, व्याकरण आदि शास्त्रों के तो ये कोविद हैं।' लोगों का कहना सुन कर बेचारे वसु के मन में बड़ी आशा हुई। उसने सोचा—'हो न हो, यही वे महात्मा हैं कि जिन के आगमन से लोगों का कल्याण होनेवाला है; मुनिवर ने भविष्य-वाणी इन्हीं के बारे में की थी।' यह सोच कर वह तुरंत उस सन्यासी के दर्शन करने गया।

लेकिन उस सन्यासी का मुख शिला-मुख से बिलकुल नहीं मिलता-जुलता था। फिर भी वसु ने बड़े गौर से उस सन्यासी का उपदेश सुना। तब उसे मालूम हुआ कि उनको जनता के जीवन के बारे में कुछ नहीं मालूम। वे तो किताबों में रटी हुई बातें बता रहे थे। बचपन से ही साधारण जनता के जीवन में निस्संकोच भाग लेने के कारण वसु को यह जानने में ज़्यादा देरी नहीं लगी।

इस के अलावा सन्यासी बड़ा क्रोधी आदमी था। उसके सामने किसी को जबान हिलाने तक की हिम्मत न पड़ती थी। अगर किसी के मन में कोई संदेह उत्पन्न हो जाता और वह सन्यासी से सवाल करता तो उसको बहुत गुस्सा आ जाता। वह कहता—'तुम लोग मूरख हो! मेरी बातें क्या समझोगे! भैंस के आगे बीन बजाई, वह बैठे पगुराई!'

इस तरह कुछ दिन होते होते लोगों का सन्यासी पर से विश्वास उठ गया। उसे कोई पूछने वाला भी नहीं रहा। आखिर सन्यासी वहाँ से चला गया। बेचारे वसु को बड़ी निराशा हुई।

और कुछ दिन बीत गए। एक दिन एक बड़ा शूर-वीर पराक्रमी योद्धा उस तरफ आया। इन महाशय ने अनेकों युद्ध जीते थे और अनगिनत दुश्मनों को धूल चटाई थी। लोगों ने कहा—'अब हमें चोर-डाकू और लुटेरों से डरने की कोई जरूरत नहीं। अब हम निश्चित होकर दिन काट सकते हैं।' वसु को फिर आशा हुई। उसने सोचा—'शायद इसी योद्धा के बारे में मुनिवर ने भविष्य-वाणी की थी।' वह उनको देखने गया। लेकिन इस योद्धा की सूरत शिला-मुख से बिलकुल नहीं मिलती थी।

इतना ही नहीं; यह योद्धा कुछ ही दिन बाद लोगों को बहुत सताने लगा। अपने अपने काम में लगे हुए लोगों को जबर्दस्ती पकड़वा लाता और उनसे बेगार लेता। जो कोई चूँ-चपट करता उसकी जान मुश्किल में पड़ जाती। जो लोग उसकी वीरता की प्रशंसा करते और उसकी सेवा में लगे रहते उनसे भी वह जानवरों की तरह पेश आता। इसलिए लोग अन्त में उससे घृणा करने लगे। कुछ ही दिनों में योद्धा की सारी साख

उठ गई और वह वहाँ से चला गया। वसु ने फिर एक लम्बी साँस ली।

और कुछ दिन बाद लोगों को मालूम हुआ कि एक बड़ा व्यापारी उस तरफ आ रहा है। इन महाशय ने अपने जहाज देश-विदेश भेज कर खूब कारोबार किया था और करोड़ों रुपया कमाया था। लोग कहते थे कि जहाँ वे कदम रखते हैं वहीं देवी लक्ष्मी अपना घर बना लेती हैं।

वसु अच्छी तरह जानता था कि उसके चारों ओर रहने वाले लोग सभी बड़े मेहनती हैं; फिर भी उनके दिन बड़ी गरीबी में कटते हैं। इसलिए उसने सोचा—'इस व्यापारी के आने से लोगों की हालत सुधर जायगी। इस व्यापारी का मुँह जरूर शिला-मुख से मिलता-जुलता होगा।'

लेकिन अन्त में इस बार भी निराशा ही हुई। पहले तो उसकी आशा पूरी होती सी दिखाई दी। ऐसा जान पड़ा, जैसे इस व्यापारी के आने से लोगों को सचमुच बहुत फायदा होगा। क्योंकि इस व्यापारी ने आकर, किसानों को बढ़ावा देकर खेतों में नई नई फसलें लगाईं और सारी उपज खुद ही खरीद ली। इससे पहले तो किसानों को बहुत मुनाफा हुआ। उन लोगों की हालत ज़रा सुधरने लगी। दूसरे धन्धों वालों को भी व्यापारी के आने से लाभ ही हुआ। नए नए धन्धे चल निकले। इस तरह व्यापारी के यश में चार चाँद लग गए। लेकिन दो साल होते होते पाँसा पलट गया। व्यापारी ने खूब सस्ता खरीदना शुरू किया। सभी चीज़ों के भाव गिर गए। इस व्यापारी के सिवा किसानों की उपज खरीदने वाला और कोई न रहा। लाचार होकर उन लोगों को व्यापारी के सामने सर झुकाना पड़ा और उसी के बताए भाव पर चीज़ें बेचनी पड़ीं। नहीं तो भूखों मरना पड़ता।
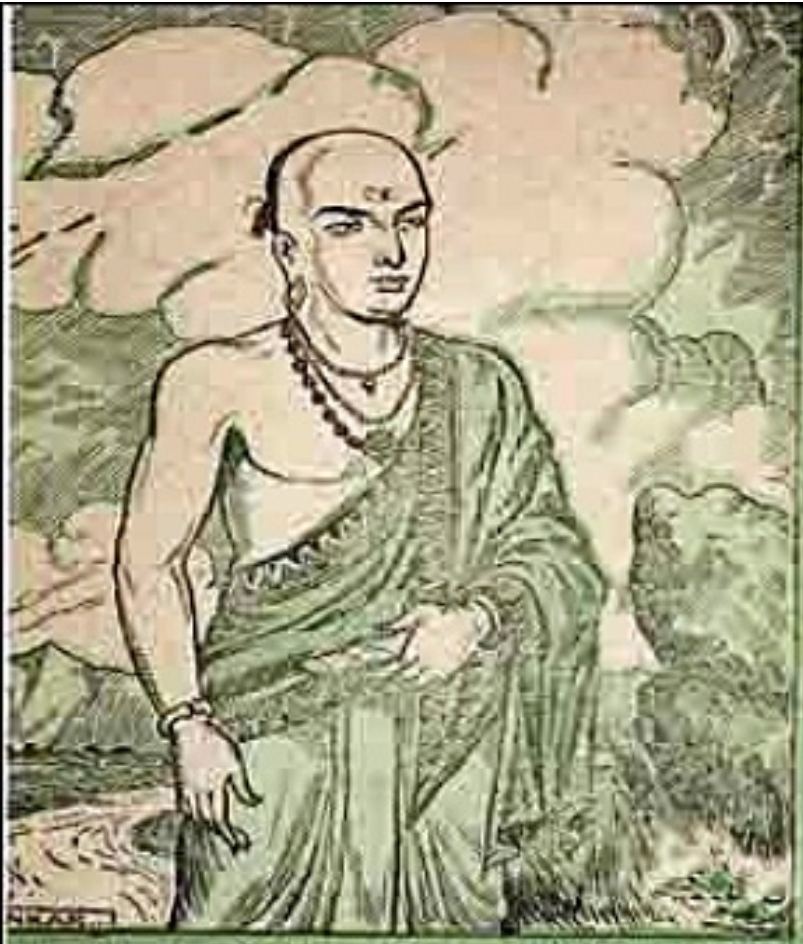
इतना ही नहीं; लोगों को खाने-पीने की और रोज़ाना इस्तेमाल की चीज़ों की भी कमी महसूस होने लगी। इन चीज़ों का भाव बढ़ गया। लोगों के लिए पेट भरना भी मुश्किल हो गया। बहुत से ऐसे लोग, जो पहले हँसी-खुशी ज़िन्दगी बिता रहे थे, अब मुश्किल से दिन काटने लगे। यहाँ तक कि अकाल पड़ गया। व्यापारी ने दोनों हाथों रुपया कमाया और अन्त में सोने-चाँदी के बोरे गाड़ियों पर लाद कर एक रात चम्पत हो गया। लोगों के दुख देख कर बेचारे वसु के मन में बड़ी वेदना हुई। उम्र के साथ साथ उसकी सूझ-समझ भी बढ़ती जा रही थी।

और कुछ दिन बाद उस तरफ़ एक महा-कवि पधारे। इस महा-कवि की ज़िन्दगी में गहरी पैठ थी। इन्होंने अनेक काव्य लिखे थे। देश-देश में इनका नाम फैला हुआ था। वसु ने सोचा—'मुनिवर की भविष्य-वाणी कभी व्यर्थ नहीं जायगी। इस कवि का मुख अवश्य उस शिला-मुख के सदृश होगा।' लेकिन कवि के दर्शन करने पर उसने देखा कि कवि का मुख शिला-मुख जैसा नहीं है। कवि ने गीत गाए। लोग उनके चारों ओर जमा हो गए और मधुर गीत सुन कर तन्मय हो झूमने लगे। इस कवि को उन्होंने साक्षात देवता ही समझ लिया। राजा-महाराजाओं से भी बढ़ कर उनकी खातिर हुई। लेकिन वास्तव में इन अपढ़ लोगों के प्रति कवि के मन में स्नेह नहीं था। उनके दुख भरे जीवन के प्रति कवि के मन में समवेदना नहीं थी।

कवि ने अपने गीतों में जनता के बारे में लिखा तो था; मगर लोगों से हिल-मिल कर रहना उनके लिए दुस्साध्य था। वे हिल-मिल कर रहते रईसों और उमरावों से

और ऐसे लोगों से जो काम-धाम कुछ नहीं करते थे। काम-काजी लोगों से वे दूर रहते थे। उनके सुख-दुख में भाग नहीं लेते थे।

अन्त में वसु ने सोचा—'यह कवि जो कहता है वह नहीं करता। यह अपने गीतों के जरिये लोगों को ठग रहा है। इसके गीत सुन्दर तो हैं, लेकिन उन में सत्य नहीं है।'

कुछ दिन बाद लोगों ने कवि की वंचना जान ली और उसकी खातिर करना छोड़ दिया। कवि वहाँ से चला गया।

वसु खेद के साथ सर झुका कर शिला-मुख के सामने जा खड़ा हो गया। मुनिवर की भविष्य-वाणी में उसका विश्वास डोल गया। बहुत से वीर-प्रतापी, तेजस्वी-ओजस्वी और धनी-मानी पुरुष आए। लेकिन किसी के मुँह में वह उदारता और करुणा नहीं दिखाई दी जो शिला-मुख में झलकती थी। इन में से किसी ने जनता की कोई भलाई नहीं की। सब के सब स्वार्थी साबित हुए।

वसु यों सोचते हुए खड़ा था कि कुछ लोग उसी राह से आए। उन लोगों ने शिला-मुख पर निगाह डाली और फिर वसु का मुँह ताकने लगे। आश्चर्य! वसु का मुँह ठीक उस शिला-मुख के जैसा था।

यह खबर बिजली की तरह आस-पड़ोस के गाँवों में सब जगह फैल गई। जिन लोगों ने बचपन में शिला-मुख की गाथा सुनी थी और धीरे-धीरे उसे भुला बैठे थे, वे सभी उस पुरानी भविष्य-वाणी की याद करके वसु को देखने दौड़े आए। आज पहली बार शिला-मुख से वसु के मुख का मिलान करके उन्हें बहुत विस्मय होने लगा।

इस तरह मुनिवर की भविष्य-वाणी अचूक साबित हुई। वसु ने अनेक विख्यात पुरुषों के दर्शन करके जो जो बातें सीख ली थीं, उनका जनता की सेवा में उपयोग किया। जनता के दुख-सुख में भाग लेकर उसका भी जीवन धन्य हो गया।

करके देखो तो ?

पेन्सिल उठाए बिना १०० लिख कर उसके नीचे अर्द्धानुस्वार दे सकते हो? अच्छा, एक कागज़ ले लो। उसका ऊपरी हिस्सा मोड़ लो। फिर १ से शुरू करके जैसा चित्र में दिखाया गया है, १०० लिख लो। उसके बाद ऊपर का मुड़ा हुआ हिस्सा उठा लो। अब तुम्हें एक सौ की संख्या और उसके नीचे की लकीर साफ साफ दिखाई देगी।

*

हर तरफ तीन तीन दियासलाई[illegible]क वर्ग बना लो। इस वर्ग के अंदर सात दियासलाई रख कर व[illegible] में बाँट डालो। तीनों हिस्सोंका विस्तार बराबर हो।

कैसे करोगे, बोलो? बगल का चित्र देखने से समझ में आ जायगा कि वर्ग को किस तरह बाँटना चाहिए। इस तरह बँटे हुए हिस्सों को नाप कर देखने से पता चल जायगा कि तीनों बराबर हैं।

*

दस रुपए के कागज़ को काँच के दो गिलासों पर रख कर, उस कागज़ पर बहुत से सिक्के रख सकते हो?

दो काँच के गिलास ले लो। दोनों को इस तरह रख दो जिस से बीच का फासला तीन अंगुल हो। उसके बाद दस रुपए का एक ताजा कागज़ ले लो। उसकी लम्बाई को दो हिस्सों में मोड़ दो। फिर उन दोनों हिस्सों को आधे में ऊपर की ओर मोड़ दो। अब उसकी शकल M के जैसी होगी। अच्छा, तुम्हारे पास जितने सिक्के हों उन सब को धीरे से कागज़ के दोनों कोनों पर टिका कर रख दो। कागज़ इन सभी सिक्कों को आसानी से ढो लेगा। बीच में मुड़ कर, गिर नहीं जाएगा।

सप्राण समाधि

सिखों के नेता गुरु गोविंदसिंहजी [illegible] प्रतापी आदमी थे। उनका नाम सुनते ही विधर्मियों को, खास कर औरंगजेब को कँपकँपी आने लगती थी। इन दोनों के बीच जानी दुश्मनी थी। जगह जगह सिखों और मुगलों में मुठभेड़ होती रहती थी।

एक बार कीर्तिपूर नामक जगह पर सिखों और मुगलों में लड़ाई छिड़ी। लड़ाई के पहले मुगलों ने दूत के द्वारा कहला भेजा—'पहले यह बूझ लीजिए कि आप को किस का सामना करना है। यह छोटे-मोटे जागीरदारों से लड़ना नहीं है; शाहंशाह आलमगीर से लड़ाई मोल लेना है। इसलिए अब भी आप चेत जाइए और इस्लाम कबूल करके बादशाह के पैरों पड़ कर माफी माँग लीजिए। हमारे बादशाह बड़े रहम-दिल हैं। वे आप को जरूर माफ कर देंगे।'

जिस समय दूत यह संदेशा सुना रहा था उस समय गुरु गोविंदसिंह का लड़का अजित भी वहाँ खड़ा था। दूत की बातें सुन कर उसकी आँखें क्रोध से लाल हो गईं। उसने झट म्यान से तलवार खींच ली और बोला—'हमारे धर्म के अनुसार दूत अवध्य होता है। हम तुम्हें छोड़ने को मजबूर हैं। जाओ, जान बचा कर तुरंत यहाँ से निकल जाओ।' इस तरह अपमानित होकर, अपना-सा

गुरुमुखसिंह

मुँह लेकर दूत लौट गया। अपने सिपहसालार के पास जाकर, उसने खूब नोन-मिर्च लगा कर सारा किस्सा बयान किया। इससे बैर की आग और भी भभक उठी।

कुछ दिन बाद मुगलों ने आनन्दगढ़ पर घेरा डाल दिया। बहुत दिन तक लड़ाई चलती रही। किले में सैनिकों की संख्या बहुत कम थी। अंत में सिखों की हार निश्चित जान पड़ने लगी। उसी किले में गुरु गोविंदसिंह की बूढ़ी माता गुजरीबाई और उनके पुत्र भी थे। तीनों चोर-दरवाजे से भाग निकले और सरहिन्द की ओर चले। मुगलों ने उस किले पर कब्जा कर लिया।

जब उन्हें गुरु गोविंदसिंह की माता के अपने दोनों पोतों के साथ भाग जाने की खबर मालूम हुई तो वे तुरंत पीछा करने लगे। बड़ी दूर तक पीछा करने के बाद अंत में उन की कामना पूरी हुई। गुजरीबाई तो किसी तरह बच गईं। लेकिन गुरु के दोनों पुत्र उन के चँगुल में फँस गए। उन्होंने खुशी खुशी दोनों को ले जाकर सूबेदार वजीरखान के सामने हाजिर किया।

इन दोनों तेजस्वी बालकों को देख कर वजीरखान को बहुत खुशी हुई। उसने उन से दुश्मनों का सा बर्ताव नहीं किया। उलटे उन्हें बड़े प्रेम से रखा और उन्हें किसी बात की कमी न होने दी। बालक फतेहसिंह और जोरावरसिंह मौत के मुँह में चैन से दिन काटने लगे।

एक दिन वजीरखान ने मजाक के तौर पर लड़कों से कहा—'बच्चो! मान लो कि मैंने तुम दोनों को छोड़ दिया। तब क्या करोगे?'

'हम लोग सेना जमा करेंगे और तुम्हारे ऊपर चढ़ाई कर देंगे।' दोनों लड़कों ने बिना हिचकिचाए जवाब दे दिया। वजीरखान ने उनकी बात का बुरा नहीं माना। 'और हार गए तो?' उसने हँसते हुए पूछा।

'फिर चढ़ाई करेंगे और हार जाने पर फिर चढ़ाई करेंगे। इस तरह जब तक जीत न जाएँ तब तक फिर फिर चढ़ाई करते ही रहेंगे।' उन वीर बालकों ने निश्शंक जवाब दिया।

यह जवाब सुन कर वजीरखान मन ही मन बालकों को सराहने लगा। लेकिन दरबार में जो मुल्ला काजी और उलेमा बैठे हुए थे उन सब को बहुत क्रोध आया। उन लोगों ने वजीरखान पर दबाव डाला और उसे इन बालकों को दण्ड देने पर मजबूर किया। आखिर काजियों ने इन मासूम बच्चों को कसूरवार ठहराया और जिन्दा दीवार में चुनवाने का फैसला किया। वजीरखान ने, जिस को इन बालकों से स्नेह हो गया था, कहा—'बच्चो, सुन लिया न काजी का फैसला? अब भी बोलो! इस्लाम कबूल कर लो! नाहक जान क्यों गँवाते हो?'

लेकिन वीर बालकों ने अविचल भाव से जवाब दिया—'हम जान दे देंगे; मगर धरम न गँवाएँगे।'

तब वजीरखान बोला—'अभी तुम लोग बच्चे हो! जिन्दगी का लुत्फ क्या जानो? इस्लाम कबूल कर लो! मैं बादशाह से कह कर तुम्हें माफ करवा दूँगा। बस, ऐशो-आराम में जिन्दगी कट जाएगी।'

लेकिन बालकों ने कहा—'हरगिज नहीं!' लाचार वजीरखान ने उन्हें दीवार में चुन देने का हुक्म दिया; लेकिन अंत तक उम्मीद बनी रही कि बच्चे हैं; मान जाएँगे। यहाँ तक कि दीवार गले तक पहुँच गई। वजीरखान ने आखिरी बार अपना सवाल दुहराया। लेकिन उन बच्चों के मुँह से निकला—'नहीं!' दीवार पूरी हो गई। दोनों बालक उस समाण समाधि में सदा के लिए सो गए। फतेहसिंह और जोरावरसिंह अमर हो गए।

पैसे के विचित्र रूप

संसार में ऐसे बहुत कम लोग होंगे, जिनका पैसे से कोई वास्ता न हो। क्योंकि दुनियाँ में पैसे का ही राज है। पैसा बहु-रूपिया है। संसार के कुछ हिस्सों में जिनसे हम बहुत दूर हैं, पैसा कई विचित्र रूप धारण करता है। कुछ प्रदेशों के लोग सिक्कों को देखते ही उन में छेद करके माला में पिरोते हैं और कुछ जगहों के लोग उन्हें ले जाकर गाड़ देते हैं; सुनिए—

१. न्यूगिनी के लोग सूअरों को बड़ी रकमों और सीप की मालाओं को छोटी-मोटी रकमों के बदले इस्तेमाल में लाते हैं।

२. सुलेमान-टापुओं में समुद्री-मछलियों के दांतों और सीप की मालाओं का पैसे की तरह इस्तेमाल किया जाता है।

३. यहाँ और न्यूगिनी में भी मजदूरों को पैसे के बदले तमाखू देने पर उन्हें बहुत खुशी होती है।

४. मोराको के कुछ हिस्सों में सेन्धा नमक पैसे की तरह इस्तेमाल में आता है। इसके अलावा यहाँ बारह बारह सिक्कों को जोड़ कर रखते हैं।

५. सिक्कों के बीचों-बीच छेद करने की प्रथा चीनवालों ने चलाई। उन के ख्याल में ऐसे सिक्कों की माला पिरो कर इधर-उधर ले जाने में बड़ी सुविधा होती है।

६. अलास्का के नजदीक के कुछ टापुओं में मक्खी को पैसे की तरह लेते-देते हैं।

७. मध्य-आफ्रिका के कुछ प्रान्तों और तुर्किस्तान में चाय की पत्तियों को ईंटों की तरह साँचे में ढाल कर, उनको पैसे की तरह खर्च करते हैं।

८. मङ्गोलिया में कुछ ऐसे अजीब चाँदी के सिक्के होते हैं, जो नावों की शकल के होते हैं।

९. प्रशान्त महा-सागर के 'याप' टापू पर तीन-चार गज तक की चौड़ाई वाले बड़े बड़े गोल पत्थर होते हैं जो वहाँ के रहने वाले बूढ़े निवासियों की संपदा को सूचित करते हैं। इन्हें झोंपड़ी के बाहर ही रख कर ये बूढ़े सब लोगों को अपनी शान दिखाते हैं। इस तरह प्रगट करते हैं कि वे बहुत मालदार हैं।

टपके फल

किसी जङ्गल के [illegible]ीक एक बगीचा था जिसके मालिक [illegible]रू था। बीरू अपनी पत्नी फु[illegible] बगीचे में ही रहा करता था। काम-काज में फुलिया भी अपने पति की मदद किया करती थी।

हाँ, वह बगीचा बीरू का नहीं था। वह बगीचा था एक रईस आदमी का जो वहाँ से चार-पाँच मील दूर एक गाँव का रहने वाला था। बगीचे में आम, लीची, अमरूद आदि तरह तरह के फल देने वाले पेड़ लगे हुए थे। मगर कायदे के मुताबिक बीरू पेड़ पर लगे फल नहीं तोड़ सकता था। वह वे ही फल चुन कर बेच सकता था, जो पक कर पेड़ से टपके होते। चार साल पहले जब एक भयानक अंधड़ आया तो बीरू को बहुत मुनाफा हुआ। टपके हुए फलों से जमीन ढँक गई और बीरू को बहुत पैसा मिला।

लेकिन वैसे अंधड़ तो हर साल नहीं आते। इसलिए बेचारे बीरू के दिन बड़ी मुश्किल में कट रहे थे। पेट भरना भी मुश्किल हो गया था। बेचारा इधर कुछ दिनों से जङ्गल में लकड़ियाँ काट कर, उन्हें गाँव में ले जाकर बेचने लगा था। उसकी गैरहाजिरी में बगीचे की देख-भाल उसकी स्त्री कर लेती थी।

बाग के चारों ओर चहर-दीवारी थी और बीचों-बीच बीरू की झोपड़ी थी। नज़दीक ही पुआल की ढेरी थी और वहीं

सोनीलाल

दो बैल बँधे रहते थे। इन बैलों की मदद से कुएँ का पानी खींच कर वह बाग के पौधों को सींचा करता था।

मुद्दत से माली का काम करते रहने के कारण बीरू का अब बाग को छोड़ कर जाने का मन नहीं होता था। फिर वह पहले सा जवान भी न था। बाग के मालिक को बीरू का बहुत विश्वास भी था।

एक दिन की बात है कि बीरू जङ्गल जाकर लकड़ियाँ काट लाया और उन्हें गाँव में बेच कर, जरूरी चीज़ें खरीद कर, घर लौट चला। थोड़ी ही दूर गया था कि कहीं से प्याज की कढ़ी की मधुर बास आई। बीरू के मुँह से लार टपकने लगी। तुरन्त लौट कर उसने प्याज खरीद लिया और मन में कढ़ी की कल्पना करते हुए घर चला।

राह में जङ्गल पड़ता था। बीरू जिसका मन सुखद कल्पनाओं में डूबा हुआ था, अचानक ठिठक गया। उसे सामने कोई काली काली डरावनी सी चीज़ दिखाई दी। नज़दीक जाने पर ही उसे बीरू पहचान सका। एक भयानक भालू गुर्राते हुए बीरू का आलिङ्गन करने को तैयार था।

बेचारे बीरू के होश उड़ गए। उलटे पाँव भागने को भी समय नहीं था। मौत मुँह बाएँ खड़ी थी। आखिर किसी तरह धीरज धर कर वह भालू से बोला—"भालू भैया! मुझे मारने से आज तो तुम्हारी भूख मिट जायगी; मगर कल क्या करोगे?"

'कल की बात कौन सोचता है!' भालू ने जवाब दिया।

'नहीं, नहीं! जरा सोच-समझ लो। मेरी बात मान जाओ तो हमेशा के लिए तुम्हारे पेट का सवाल हल हो जाय!' बीरू ने कहा।

'अच्छा, बोलो! क्या कहते हो?' भालू ने पूछा। 'जब जब तुम्हें भूख लगे हमारे

घर आ जाना! मैं तुम्हें भर-पेट खिला दूँगा।' बीरू ने कहा। भालू दिमाग लड़ाने लगा।

तब बीरू ने गठरी खोल कर उसे दिखाई और बोला—'देखो! सब चीज़ें लिए जा रहा हूँ। रात को मजेदार कढ़ी बनने वाली है। बोलो, आओगे रात को खाने?'

कढ़ी का नाम सुनते ही भालू के मुँह में पानी भर आया। बोला—'अच्छा, जाओ! छोड़ देता हूँ! लेकिन रात को कढ़ी खाने नहीं मिली तो बस, याद रखना; तुम्हें कोई नहीं बचा सकेगा! हाँ, भला बताओ तो तुम्हारा घर कहाँ?''

'वह जो बगीचा दिखाई देता है न; उसी में।' बीरू ने उसे अपना घर दिखाया।

भालू चला गया। बीरू की जान में जान आ गई। मगर बला अभी नहीं टली थी। रात को भालू फिर आने वाला था।

बीरू ने घर पहुँच कर पत्नी को सारा किस्सा सुना दिया। वह बेचारी बड़े सोच में पड़ गई। लेकिन कोई चारा न सूझा।

खैर, किसी तरह कढ़ी तैयार हुई। सोंधी महक से सारी झोंपड़ी भर गई। बीरू और उसकी स्त्री से भालू के इन्तज़ार में बैठे न रहा गया। खाने बैठे। अन्त में देखा तो न कढ़ी ही बची थी और न भात ही था।
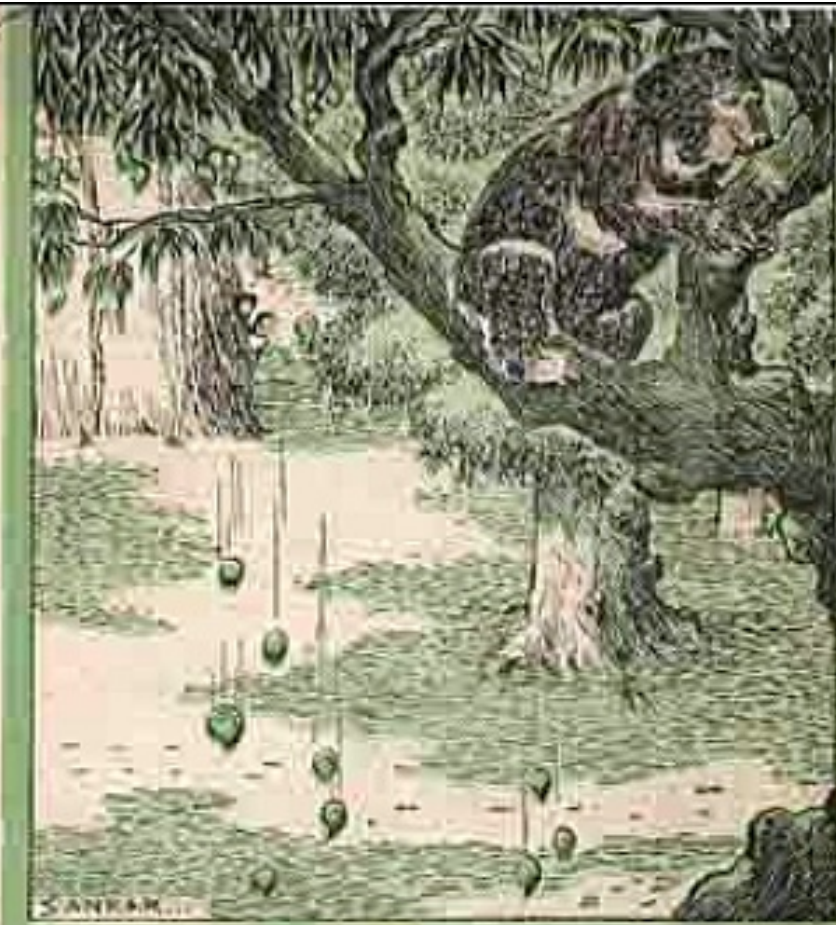
बीरू ने स्त्री से कहा—'फिर से बनाओ!' लेकिन रसोई का सामान कहाँ से आए? उधर भालू के आने का समय भी हो गया था। बीरू और उसकी स्त्री की जान आफ़त में पड़ गई। अन्त में दोनों ने झोंपड़ी का दरवाज़ा बन्द कर दिया और बाहर जाकर चुपचाप पुआल की ढेरी में छिप रहे।

दस-बीस मिनट बाद थोड़ी आहट हुई। बीरू और उसकी स्त्री के होश उड़ गए। और थोड़ा समय बीत गया। भालू के

चलने और गुर्राने की आवाज़ सुनाई दी। बीरू और उसकी स्त्री ने सोचा—'अब जान नहीं बचेगी!' उधर भालू ने झोंपड़ी के अन्दर प्रवेश किया। लेकिन वहाँ कोई न था। उसे बहुत क्रोध आ गया। उसने सोचा—'यह दुष्ट मुझे चकमा दे गया। अच्छा, अभी चखाता हूँ इसे मज़ा!'

बस, भालू ने मट्टी की सारी हाँडियाँ फोड़ दीं। चीज़ें सभी इधर-उधर फेंक दीं। कपड़े-लत्ते बिखेर दिए। गुस्से से पैर पटकते हुए खूब उछला-कूदा। आखिर मन मसोस कर बाहर निकला। इतने में उसकी नज़र बाग के पेड़ों की फलों से लदी हुई डालों पर पड़ी। उसने सोचा—'बच्चू! अब देखोगे, भालू को चकमा देने का क्या नतीजा होता है!'

बस, और क्या था! भालू एक एक पेड़ पर चढ़ कर, डालों को तोड़ कर, सारे बाग को तहस-नहस करने लगा। पेड़ों के नीचे की ज़मीन पर टपके फल बिछ गए। सारे बाग का सत्यानास करके वह फिर झोंपड़ी के पास आया।

लेकिन वहाँ क्या था! खाचार बाहर निकला। इतने में बीरू की स्त्री को छींक आई। वह इतने ज़ोर से छींकी कि भालू ने समझा—बन्दूक की आवाज़ है। वह सिर पर पैर रख कर वहाँ से भागा।

सवेरा होने के बाद ही बीरू और उसकी स्त्री को पुआल की ढेरी में से बाहर आने की हिम्मत हुई। बगीचे में घूम कर देखा तो जहाँ देखो वहाँ फल! इतने में बगीचे का मालिक भी वहाँ आ पहुँचा। सारी कहानी सुनने के बाद उसने कहा—'अच्छा, कायदे के मुताबिक टपके फल सभी तुम्हारे हैं।' उन फलों को बेचने से बीरू को बहुत नफ़ा हुआ। भालू ने उसका बड़ा एहसान किया।

पेड़ ऊपर ही क्यों बढ़ते हैं ?

इस सवाल का जवाब जानने के पहले हमें एक बात याद रखनी होगी। पेड़ को ज़मीन के ऊपर ही देख कर हम सोचते हैं—'पेड़ ऊपर ही बढ़ता है।' लेकिन यह संपूर्ण सत्य नहीं। पेड़ का कुछ हिस्सा नीचे भी बढ़ता है। इसी को हम 'जड़' कहते हैं। पेड़ के जिस हिस्से को जिधर बढ़ना होता है, वह उसी ओर बढ़ता है। इसका एक कारण है—

जो बीज पेड़ को जन्म देता है उसके कुछ अणु ऐसे होते हैं, जो रोशनी और हवा में ही बढ़ते हैं। इसलिए वे उसी ओर बढ़ते हैं, जिधर ये दोनों [illegible] ऐसी हैं।

लेकिन इस से ठीक उलटे [illegible] में कुछ अणु ऐसे होते हैं जो अंधेरे में ही बढ़ते हैं। इन अणुओं से धरती की आकर्षण-शक्ति का भी कुछ संबन्ध होता है। इसलिए ऐसे अणु ज़मीन के अंदर नीचे की ओर ही बढ़ते हैं।

हम बीज से कुछ तमाशे कर सकते हैं; उसे उल्टा कर बो सकते हैं। फिर भी उगते वक्त पौधा ठीक ही उगेगा। पत्तों वाला हिस्सा ऊपर की याने रोशनी की ओर ही होगा और जड़ों वाला हिस्सा नीचे की याने अंधेरे की ओर ही होगा।

इस से हम जान सकते हैं कि हर पौधे के दो प्रधान हिस्से होते हैं—एक वह जो हमें ज़मीन के ऊपर दिखाई देता है; दूसरा वह जो हमें दिखाई नहीं देता; ज़मीन के अन्दर गड़ा रहता है।

इन दोनों हिस्सों में से एक भी दूसरे की मदद के बिना जीवित नहीं रह सकता। पेड़ की बनावट ही ऐसी होती है। पत्तों वाला हिस्सा रोशनी और हवा को लेता हुआ ऊपर की ओर बढ़ता है। जड़ों वाला हिस्सा ज़मीन में घुस कर पानी और जीवन देने वाले लवणों को लेता हुआ, पेड़ को सबल बनाता है।

जीवन-जल

कहते हैं कि [illegible] समय कुण्डल-नगर में एक राजा रहता था। एक बार वह बीमार पड़ गया। बीमारी भी थी बड़ी अजीब। राजा घड़ों पानी पी जाता था। तरह तरह के शरबत और औषध पी जाता था; मगर उसकी प्यास बुझती ही न थी। यह अमिट प्यास ही राजा की बीमारी थी। आखिर नौबत यहाँ तक आई कि राजा चल-फिर भी न सकता था। बड़े, बड़े, वैद्य-हकीम आए। तरह तरह की दवाएँ आजमाई गईं। लेकिन उनसे कोई फायदा न हुआ।

उस राजा के कोई संतान न थी। तीन भांजे थे, जो अनाथ होने के कारण उसी के यहाँ पल रहे थे।

एक दिन की बात है कि ये तीनों भाई उदास-मन से राज-महल के सामने के बगीचे में टहल रहे थे। उसी समय बूढ़े माली ने उन्हें देखा और उदासी का कारण पूछा। कारण जान कर उसने कहा—'लड़को! ये वैद्य लोग कुछ नहीं कर सकते। मैंने बचपन में सुना था कि ऐसी बीमारियों की एक ही दवा होती है। उस दवा को कहते हैं जीवन-जल।' 'अच्छा तो यह जीवन-जल कहाँ मिलता है?' भाइयों ने उतावली के साथ पूछा। 'ठीक-ठीक तो नहीं मालूम। लेकिन सुना तो है कि पूरब की ओर मिलता है।' माली ने उत्तर दिया।

दूसरे दिन सबेरे ही बड़े भाई ने राजा की इजाजत ली और अपने घोड़े पर सवार

सुनीता देवी

होकर पूरब की ओर चला। बहुत दूर जाने के बाद उसे दो पहाड़ियों के बीच एक घाटी मिली। वह उस घाटी में से जा रहा था कि एक तपस्वी ने जो पहाड़ की एक चट्टान पर बैठ कर तप कर रहे थे, पुकार कर कहा—'बच्चे! कहो, किधर जा रहे हो?'

'अरे बुड्ढे! तुझे क्या पड़ी है? जहाँ मन होगा वहाँ जाऊँगा मैं!' नासमझ राजकुमार ने जवाब दिया। 'वाह भैया!' तपस्वी ने कहा और चुप हो रहे।

राजकुमार थोड़ी ही दूर गया था कि दोनों ओर की चट्टानें उसकी ओर झुकने लगीं। बस, वह अपने घोड़े सहित उन्हीं के बीच दबा रह गया।

जब बहुत दिन बीत गए और बड़ा भाई लौट कर नहीं आया तो मँझला घर से निकला और उसी ओर चला। वह भी अंत में उसी घाटी में पहुँचा।

चट्टान पर तप करने वाले तपस्वी ने उसे भी पुकारा। उस ने भी उसी तरह जवाब दिया। तपस्वी ने कहा—'वाह भैया!' और चुप हो रहे। मँझला थोड़ी ही दूर गया था कि उसका भी वही हाल हुआ जो उसके बड़े भाई का हुआ था। वह भी चट्टानों के बीच दबा रह गया।

यों जब बहुत दिन बीत गए और मँझला भी लौट कर नहीं आया तो छोटा भी घर से निकला। वह भी अंत में उसी घाटी में पहुँचा। लेकिन ज्यों ही उस की नजर तपस्वी पर पड़ी उसने घोड़े से उतर कर उन्हें विनय के साथ प्रणाम किया। तपस्वी ने वही सवाल किया जो उसके दोनों भाइयों से किया था। तब छोटे ने कहा—'मेरे मामा जो कुंडल-नगर के राजा हैं, बीमार हैं। यह बीमारी है ऐसी प्यास जो बुझती ही नहीं। इसलिए जीवन-जल की खोज में जा रहा हूँ।'

तब तपस्वी ने छोटे पर प्रसन्न होकर कहा—'अच्छा बेटा! जीवन-जल के लिए तुम्हें और ज्यादा दूर जाने की जरूरत नहीं। देखो, उस ओर जो पहाड़ की चोटी दिखाई देती है न, वहाँ चले जाना। वहाँ तुम्हें पत्थर का एक बहुत बड़ा दरवाजा दिखाई देगा। मैं तुम्हें एक कमण्डल दूँगा। उसे तुम उस दरवाजे से छुला लेना। बस, तुरंत फाटक खुल जाएगा। लेकिन उसी समय दो शेर तुम्हारे ऊपर कूद पड़ेंगे। उन पर कमण्डल का जल छिड़क देना। बस, वे पालतू कुत्ते बन जाएंगे। अंदर आने पर तुम्हें एक सरोवर दिखाई देगा। उसकी बगल में एक मूर्ति खड़ी होगी। सरोवर से जीवन-जल भर लेने के बाद कुछ बूंदें उस मूर्ति पर भी छिड़क देना!'

छोटे ने तपस्वी को और एक बार प्रणाम किया और कमण्डल लेकर वहाँ से चला। थोड़ी ही देर बाद वह उस पत्थर के दरवाजे के पास पहुँच गया, जो कमण्डल छुलाते ही खुल गया। उसी समय उस पर दो शेर दहाड़ते हुए टूट पड़े। लेकिन कमण्डल का जल छिड़कते ही शान्त हो गए। छोटा राजकुमार सीधे अंदर चला गया। उसे एक बगीचा और उसके बीचों-बीच एक सरोवर दिखाई दिया। उसने सरोवर का जल कमण्डल में भर लिया। मुड़ते ही उसे एक सुन्दरी युवती की मूर्ति दिखाई दी। उसने सोचा—'शायद तपस्वी ने इसी मूर्ति के बारे में बताया था' और कमण्डल के जल की दो बूंदें उस पर छिड़क दीं। तुरंत वह मूर्ति सप्राण होकर एक रूपवती राजकुमारी बन गई। 'तुम कौन हो? तुम्हारी यह हालत क्योंकर हुई?' राजकुमार ने पूछा। 'मैं इस प्रदेश की रानी थी। देवताओं के शाप से मेरा राज उजड़ गया और मैं पत्थर

की मूरत बन गई। आज तुम्हारी कृपा से मैं शाप-मुक्त हो गई। मैं और तो कुछ नहीं चाहती। हाँ, वादा करो कि एक साल बाद तुम फिर इधर आओगे। ज़रूर आना, भूलना नहीं।' उस राजकुमारी ने कहा और चली गई।

छोटा राजकुमार जीवन-जल लेकर घर लौट चला। राह में उसने फिर तपस्वी के दर्शन किए और अपने भाइयों का हाल पूछा। तब तपस्वी ने उसे सारा किस्सा सुनाया और चेताया—'खबरदार! उन दोनों की नीयत अच्छी नहीं है।' लेकिन छोटे राजकुमार के हठ करने पर लाचार होकर उन्होंने उन दोनों दुष्टों को पत्थर की कारा से छुड़ाया। छोटे ने भाइयों को जीवन-जल का सारा वृत्तांत सुना दिया। तीनों सानंद घर लौट चले।

वे कुण्डल-नगर से थोड़ी ही दूर पर थे कि दोनों बड़े भाइयों ने कमण्डल में का जल चुरा लिया और उस में खारा पानी भर दिया। बेचारे छोटे को इस विश्वास-घात का तनिक भी भान न हुआ।

जब तीनों भाई घर लौटे तो राजा की हालत और भी बिगड़ी हुई थी। छोटे ने कमण्डल में के खारे पानी को जीवन-जल समझ कर राजा को पीने दिया। पानी की

बूँद गले से उतरी भी नहीं थी कि राजा आग-बबूला हो गया। उसने तुरन्त छोटे को राज से निकल जाने की आज्ञा दे दी। छोटे के चले जाने के बाद दोनों बड़े भाइयों ने जीवन-जल निकाल कर राजा को दिया। पीते ही राजा चङ्गा हो गया! वह उन दोनों भाइयों से बहुत प्रसन्न हो गया।

राज से निकाले जाने के बाद छोटा जङ्गल में आकर रहने लगा। धीरे-धीरे साल बीतने को आया।

उधर उस राजकुमारी ने जिसे छोटे ने प्राण-दान दिया था, नौकरों को बुला कर

हुक्म दिया—'किले के दरवाज़े से एक मील दूर तक सोने की ईंटें बिछा कर राह बना दो। जो उस राह के बीचों-बीच घोड़ा दौड़ाते हुए आयगा, उसी के लिए दरवाज़ा खोलना। नहीं तो नहीं।'

कुछ दिन बाद बड़ा राजकुमार जिसके मन में इस राजकुमारी से ब्याह करने की इच्छा पैदा हो गई थी, घोड़े पर सवार होकर चला। किले तक पहुँचने के बाद जब उसे सोने की राह दिखाई दी तो उसने सोचा—'चमाचम चमकती हुई इस सोने की राह पर घोड़ा कैसे दौड़ाऊँ? बगल से होकर चला जाऊँगा।'

उसने सोने की राह की दाईं बगल से जाकर किले का फाटक खटखटाया। लेकिन राजकुमारी के नौकरों ने जो छिप कर सारा हाल देख रहे थे, दरवाज़ा न खोला।

मँझला भी उसी तरह वहाँ आया। राह की बाईं बगल से जाकर उसने दरवाज़ा खटखटाया। लेकिन नौकरों ने दरवाज़ा नहीं खोला।

अन्त में जब साल बीतने को ही था, छोटा राजकुमार घोड़ा दौड़ाते हुए उस राह से आया। उसके मन में तो बस, एक ही चिन्ता थी, राजकुमारी से मिलने की। इसलिए वह सोने की राह के बीचों-बीच से सरपट घोड़ा दौड़ा कर फाटक के पास पहुँचा और किवाड़ खटखटाया। नौकरों ने तुरन्त फाटक खोल दिया।

बड़ी धूम-धाम के साथ उस राजकुमारी का छोटे राजकुमार से ब्याह हो गया। अन्त में उन दोनों ने कुण्डल-नगर जाकर राजा का आशीर्वाद माँगा।

जब राजा को सच्चा हाल मालूम हुआ तो उसने छोटे राजकुमार को माफ़ कर दिया और उसे अपनी गद्दी दे दी। दोनों विश्वास-घाती भाइयों को देश-निकाला दे दिया गया।

बताओ तो ?

★

१. सुप्रसिद्ध तीर्थ, चार अक्षर। पहले दोनों अक्षर काटने से रस मिलता है, आदि और अंत के अक्षर काटने से औषध, बीच के दोनों अक्षर काटने से काफी और दूसरा अक्षर काटने वर्षा होना बन जाता है।

२. तीन अक्षर, सीताजी का एक नाम, बिहार की एक प्रांतीय बोली, शरण आने से हिन्दी के एक सुप्रसिद्ध आधुनिक कवि।

३. चार अक्षर, संस्कृत के प्रसिद्ध कवि, दुर्गादास हैं; मगर राठौर नहीं।

४. दो अक्षर, बिहार का एक शहर। इसके आगे 'क' लगा देने से हमारे पड़ोसी देश की राजधानी बन जाता है।

५. तीन अक्षर, एक ऋतु का नाम। पहला अक्षर काटने से नियम, दूसरा अक्षर काटने से सौ और आखिरी अक्षर काटने से तीर, अर्थ होता है।

बता न सको तो जवाब के लिए ५६-वाँ पृष्ठ देखो !

पूरा करो !

★

नीचे दाईं ओर कुछ ऐसे शब्द दिए गए हैं, जिन में से हरेक के अंत में 'दन' आता है। समझ लो कि 'दन' के आगे जितने नुक्ते हैं, उतने अक्षर वहाँ से गायब हैं। शब्द को पूरा करो। पूरे शब्द का जो माने होता है वह बाईं ओर दिया गया है। पूरा करने के बाद ऐसे ही कुछ और शब्द सोच कर लिख लेना।

१. मुख . दन
२. अर्ज . . दन
३. रुकना . . . दन
४. समर्थन . . . . दन
५. विनयपूर्वक अर्ज . . . . दन
६. गणेशजी . . . दन
७. पैदाइश . . . दन
८. बुद्ध के पिता . . दन
९. घर . दन

पूरा न कर सको तो जवाब के लिए ५६-वाँ पृष्ठ देखो !

एक - रेखा - चित्र

मेरी बिल्ली

★

[देवकुमार शर्मा, मुंगेर]

मेरी बिल्ली चोरी चोरी
खा जाती है दूध-मलाई।
बहुत उछलती, बहुत कूदती
नटखट मेरी बड़ी बिलाई।

एक भलाई यह करती है
म्याऊँ - म्याऊँ चिल्लाती है;
और ऊधमी चूहों को यह
पकड़ तुरत ही खा जाती है।

गुदगुदी

एक मालिक ने अपने नौकर से कहा—'देखो भैया! मैं तुम्हें सुधरने का एक और अच्छा मौका देना चाहता हूँ! कल से काम पर आने की ज़रूरत नहीं।'

—+—

एक अध्यापिका ने एक लड़के का लेख, जिस में बड़े बड़े शब्दों की भरमार थी, देख कर पूछा—'क्यों, रे! लेख तो मौलिक है न?' 'जी! ऐसा तो नहीं कहा जा सकता। इसमें के कुछ शब्द आप को कोष में भी मिलेंगे।' लड़के ने सोच-विचार कर जवाब दिया।

—+—

एक अध्यापक ने लड़के को पढ़ाने में माथा खपा खपा कर कहा—'अगर मैं नहीं होता तो तुम इस शहर के सब से बड़े गधे होते।'

—+—

'डाक्टर साहब! मैं चंगा हो जाऊँगा?' मरीज़ ने पूछा। 'मुझे तुम्हारे चंगे हो जाने की सौ-फी-सदी आशा है। कहते हैं कि इस रोग से नब्बे-फी-सदी आदमी मर जाते हैं। मेरे नौ मरीज़ मर चुके। तुम दसवें हो। इसलिए ज़रूर अच्छे हो जाओगे।' डाक्टर ने कहा।

—+—

मुन्नी अपनी दो-तीन सखियों के साथ खेल रही थी कि रानी भी खेलने आई। उसका आना मुन्नी को पसन्द नहीं था। इसलिए उसने कहा—'रानी! तू नौकरानी है। आज मेरी छुट्टी है। इसलिए तू जा सकती है।'

रंगीन चित्र-कथा, चौथा चित्र

बिल्ली ने कुत्ते की जो तस्वीर दी थी उसे कृपासेन ने घर लौट कर सब लोगों को दिखाया। बोलती तस्वीर थी वह। वह कुत्ता भौंकता था और अपनी विचित्र चेष्टाओं से सब को हँसाता था। उसे देख कर लोगों को बहुत अचरज हुआ। 'जरूर पिता का राज्य इसी राजकुमार को मिलेगा!' सब लोगों ने सोचा।

कुत्ते की वह तस्वीर देख कर कृपासेन के पिता भी बहुत खुश हुए। इतनी खुशी हुई कि उसके मारे राजा फिर से जवान हो गया! जवानी पाते ही राजा ने सोचा—'मैं और कुछ दिन क्यों न राज करूँ! अभी से राज-पाट सब छोड़ कर क्या करूँगा?' यह सोच कर उसने लड़कों की और भी एक कठिन परीक्षा लेनी चाही जिससे वे सफल न हो सकें। 'जो कोई चार सौ गज लम्बा कपड़ा जो इतना महीन हो कि सुई के छेद में से निकल जाए, लाएगा, उसे यह राज मिलेगा।' उसने कहा।

तुरन्त तीनों राजकुमार फिर अपने अपने घोड़ों पर सवार होकर घर से निकले। इस बार कृपासेन सीधे बिल्ली के महल में गया। बिल्ली ने बड़ी आव-भगत की और तुरन्त उसकी इच्छा पूरी कर दी। कृपासेन जब वह अमूल्य वस्त्र लेकर घर लौटा तो राजा को बहुत खुशी हुई। लेकिन वह इतनी आसानी से गद्दी छोड़ने को तैयार न था। इसलिए उसने कहा—'जो संसार की सब से सुन्दरी कन्या को ले आएगा उसे यह राज अवश्य मिलेगा।'

तीसरी बार भी कृपासेन ने बिल्ली के पास जाकर सकुचाते हुए अपनी इच्छा बताई। तब बिल्ली बोली—'अच्छा, इसमें क्या लगा है? मेरा सिर काट लो! बस, तुम्हारा काम बन जाएगा।' लेकिन कृपासेन यह प्रस्ताव सुन कर भौंचक रह गया। तब बिल्ली ने उसे बहुत समझाया। फिर भी कृपासेन ऐसा घोर पाप करने को तैयार न हुआ। अन्त में जब बिल्ली ने कहा कि इससे उसकी भी भलाई होगी तो वह राजी हुआ। उसने आँखें मूँद लीं, सिर फिरा लिया और किसी तरह उस प्यारी बिल्ली का सिर काट डाला। ज्यों ही बिल्ली निर्जीव होकर गिरी, त्यों ही उसकी जगह एक अपूर्व सुन्दरी उठ खड़ी हो गई।

चन्दामामा पहेली

बायें से दायें :

2. जिन्दगी
5. खेल
7. मर्यादा
8. कदम
10. बन्ध
11. सुन्दर
12. आदत
13. भूल
15. पाप
17. दुलार का नाम
19. मीत

1 ता	■	2	3		■	4 ध
5	6	■		■	7	
■	8	9	■	10		■
■	■	11			■	■
■	12		■	13	14	■
15		■	16	■	17	18
सि	■	19			■	ज

ऊपर से नीचे :

1. तालाब
3. बहू
4. दौलत
6. जलन
7. महीना
9. घना
10. बन्दर
12. जंगली जानवर
14. पानी
15. तलवार
16. बोझ
18. शरम

फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

जून - प्रतियोगिता - फल

*

जून के फोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनकी प्रेषिका को १०) का पुरस्कार मिलेगा।

परिचयोक्तियाँ :

पहला फोटो : काल-पाश
दूसरा फोटो : प्रेम-पाश

प्रेषिका : कुमारी मंगला अरोड़ा, कानपुर.

ये पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ प्रेषिका के नाम-सहित जून के चन्दामामा में प्रकाशित होंगी। जून के अङ्क के प्रकाशित होते ही पुरस्कार की रकम भेज दी जाएगी।

जुलाई की प्रतियोगिता के लिए बगल का पृष्ठ देखिए।

एक अनिवार्य सूचना :

परिचयोक्तियाँ बगल के पृष्ठ के कूपन पर ही लिख कर भेजनी चाहिए। तीन पैसे का स्टाम्प लगा कर बुक-पोस्ट में भेजी जा सकती हैं। साथ में कोई चिट्ठी न हो।

फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

जुलाई १९५३ :: पारितोषक १०)

★ ऊपर के फोटो जुलाई के अङ्क में छापे आएँगे। इनके लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए।

★ परिचयोक्ति फोटो के उपयुक्त हो। तीन-चार शब्द से ज्यादा न हों। पहले और दूसरे फोटो की परिचयोक्तियों में परस्पर सम्बन्ध हो। परिचयोक्तियाँ, पूरे नाम और पते के साथ कूपन पर ही लिख कर भेजनी चाहिए। १०- मई के अन्दर ही हमें पहुँच जानी चाहिए।

★ प्राप्त परिचयोक्तियों की सर्वोत्तम जोड़ी के लिए १०) का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ परिचयोक्तियाँ भेजने का पता :

फोटो – परिचयोक्ति – प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी : : मद्रास-२६.

→ चन्दामामा - फोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता - कूपन ←

पहले फोटो की परिचयोक्ति ....

दूसरे फोटो की परिचयोक्ति ....

भेजनेवाले का नाम ....

पूरा पता ....

'चार सवाल' का जवाब

१. घड़ी के बारह बजाने में ६६ सेकेण्ड लग जाएंगे। पहली चोट और छठी चोट के बीच ६-६ सेकण्ड की पाँच अवधियाँ होंगी। पहली और बारहवीं चोट के बीच ६-६ सेकण्ड की ११ अवधियाँ होंगी। इसीलिए घड़ी के बारह बजाने में ६६ सेकण्ड लग जाएंगे।

२. घर वाली के लड़के ने ३ पाव वाले बरतन में दो बार दूध भरा और उसे पाँच पाव वाले बरतन में डाल दिया, जिससे वह बरतन तो भर गया और तीन पाव वाले बरतन में पाव भर दूध बच रहा। फिर उसने पाँच पाव वाले बरतन में के दूध को दूध वाले के बरतन में डाल दिया और तीन पाव वाले बरतन में बचे हुए पाव भर दूध को पाँच पाव वाले बरतन में डाल दिया। अब उसने तीन पाव वाले बरतन में दूध भरा और पाँच पाव वाले बरतन में डाल दिया, जिसमें एक पाव दूध था। तब ठीक चार चार पाव के दो हिस्से हो गए।

३. आखिरी लड़के ने फल के साथ टोकरी भी ले ली।

४. पुआल की ढेरी के चारों ओर चक्कर लगाने में चोर को चालीस और घर वाले को तीस सेकण्ड लग जाते हैं। चोर जितनी देर में तीन चक्कर लगाता उतनी देर में घर वाला चार चक्कर लगा लेता। चोर और घर वाले के बीच आधे ही चक्कर का फ़ैसला था। इसलिए दो चक्कर लगाते ही घर वाले ने चोर को पकड़ लिया।

चन्दामामा पहेली का जवाब :

'बताओ तो?' का जवाब :

१. बनारस २. मैथिली ३. कालिदास

४. रानी ५. शरत

'पूरा करो' का जवाब :

१. वदन २. आवेदन ३. आच्छादन

४. अनुमोदन ५. नम्र निवेदन ६. गजवदन

७. उत्पादन ८. शुद्धोदन ९. मदन

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Ltd., Madras 26 and Published by him, from Chandamama Publications, Madras 26. Controlling Editor: SRI CHAKRAPANI

Photo by A. L. Syed

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

वाद्य - यंत्र

प्रेषक
खुशालचन्द बी. शाह, गदग

रङ्गीन चित्र-कथा, चित्र – ४